संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२६ ● : संयुक्तांक ३६ व ३७ ● ०५ एवं १२ सितम्बर २०२४ (गुरुवार) भाद्रपद शुक्लपक्ष नवमी सम्वत् २०८१ ● दयानन्दाब्द २०० वेद व मानव सृष्टि सम्वत्: १६६०८५३१२५

गुरु दक्षिणा (शिक्षक दिवस पर)

मथुरा में विराज रहे दण्डी स्वामी विरजानन्द जी की ख्याति उन दिनों लोक में प्रसिद्धि पा रही थी। दयानन्द उनकी विद्वत्ता से परिचित थे। सन् १८५५ में उनका सामीप्य उन्हें प्राप्त हो चुका था। उन्होंने तुरन्त मथुरा की राह पकड़ ली।

संवत् १९१७ कार्तिक शुदी २ (सन् १८६०) को स्वामी दयानन्द जी ने मथुरा पहुँच कर व्याकरण के सूर्य दण्डी स्वामी विरजानन्द जी की कुटिया का द्वार खटखटा दिया।

दण्डी स्वामी ने दयानन्द का परिचय पूछा और कुटिया के द्वार खोल दिए । दयानन्द का अभीष्ट पूरा हुआ। वे गुरु के चरणों में नतमस्तक हो गए।

गुरु ने कहा-दयानन्द तुमने अभी तक जितने भी ग्रन्थ पढ़े हैं,उनमें अधिकतर अनार्ष ग्रन्थ हैं। मैं मनुष्यकृत ग्रन्थ नहीं पढ़ाता हूँ। यदि तुम मुझ से विद्याध्ययन करना चाहते हो तो प्रथम अनार्ष ग्रन्थों का परित्याग करना होगा।

दयानन्द जी ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर अनार्ष ग्रन्थों का त्याग करते हुए उन्हें यमुना नदी में बहा दिया।

पढ़ने के लिए दयानन्द जी को महाभाष्य की आवश्यकता हुई। पैसा पास नहीं था। दण्डी स्वामी की प्रेरणा से नगरवासियों ने सहयोग किया। ३१ रुपये एकत्रित कर दयानन्द के लिए महाभाष्य की एक प्रति क्रय कर ली गई। दण्डी स्वामी इस समय जीवन के ८१ वर्ष पूर्ण कर चुके थे।

पढ़ाई की व्यवस्था तो हो गई, परन्तु भोजन की व्यवस्था न हो सकी। उस वर्ष उत्तर भारत दुर्भिक्ष के चंगुल में फंसा कराह रहा था। इसका कुप्रभाव मथुरा को भी झेलना पड़ा। इसलिए लम्बे समय तक स्वामी दयानन्द जी को चने खाकर ही अपनी क्षुधा को शान्त करने के लिए विवश होना पड़ा।

धीरे-धीरे दयानन्द के विनम्र स्वभाव, तेजस्वी व्यक्तित्व और विद्वत्ता से मथुरा निवासी परिचित होने लगे। कुछ समय दुर्गाप्रसाद क्षत्रिय के घर उनके भोजन की व्यवस्था हुई। उसके पश्चात् अमरलाल ज्योतिषी ने दयानन्द जी को आदरपूर्वक अपने घर में प्रवेश कराया और उनके भोजन, पुस्तकादि का पूर्ण प्रबन्ध किया। रात्रि में अध्ययन के लिए प्रकाश की आवश्यकता थी। दीये के प्रकाश में पढ़ने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था, परन्तु दीया जलाने के लिए तेल की आवश्यकता थी। तेल की व्यवस्था लाला गोवर्धन सर्राफ ने की।

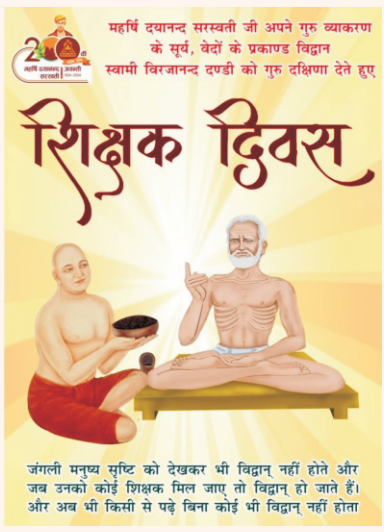

उसके लिए वे चार आना प्रतिमास दिया करते थे। दूध के लिए दो रुपये प्रतिमास श्री हरदेव पत्थर वालों के यहाँ से आते थे।

निवास का प्रबन्ध पहले दिन ही हो गया था। मथुरा में विश्रामघाट के लक्ष्मी नारायण मन्दिर के नीचे प्रवेश द्वार के साथ एक छोटी-सी कोठरी उन्हें मिल गई थी। यद्यपि वे उसमें पैर पसार कर सो भी नहीं सकते थे, फिर भी सन्तुष्ट थे।

दण्डी स्वामी को ब्रह्ममुहूर्त में साधना करने का अभ्यास था। वे प्रातः-सायं यमुना के यथेष्ट जल में स्नान करते और यमुना का जल ही पीते थे। इस निमित्त शिष्य दयानन्द जल के आठ-दस घड़े प्रातः और आठ-दस घड़े सायं नित्य ही कंधे पर रख कर गुरु-कुटिया में पहुँचाते। पीने के पानी के लिए उन्हें यमुना की पवित्र गहरी धाराओं में उतरना पड़ता था। इसके पश्चात् भ्रमणार्थ चले जाना, लौटने पर स्नानादि कर योगासन और प्राणायाम का अभ्यास करना और फिर सन्ध्या-उपासना में मन लगाना। यथासमय विद्याध्ययन के लिए गुरु चरणों में उपस्थित हो जाना। इस कार्य में वे कभी भी विलम्ब नहीं करते थे। वे आदर्श गुरु के आदर्श शिष्य थे।

स्वामी दयानन्द जी की स्मरणशक्ति विलक्षण थी। एक-दो बार सुनी हुई बात उन्हें विस्मृत न होती थी। गुरु को भी अपने इस शिष्य की स्मरणशक्ति पर पूरा भरोसा था। इसलिए वे कोई भी पाठ दयानन्द को दो बार नहीं पढ़ाते थे। एक बार दयानन्द अष्टाध्यायी की प्रयोग सिद्धि अपने निवास पर जाते-जाते भूल गए। प्रयास करने पर भी उन्हें वह सिद्धि स्मरण न आ सकी। उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे दौड़ते हुए गुरु चरणों में उपस्थित हुए और वह प्रयोग सिद्धि दोबारा बता देने की प्रार्थना की। परन्तु उनकी प्रार्थना स्वीकार न हुई। वे दो-तीन दिन तक इसी प्रयास में लगे रहे, पर उन्हें सफलता न मिल सकी। अन्त में गुरु विरजानन्द दण्डी ने उनसे कहा-"दयानन्द हम यह प्रयोग सिद्धि तुम्हें दोबारा न बतायेंगे और जब तक यह प्रयोग-सिद्धि तुम्हें स्मरण नहीं होगी, तब तक आगे को

क्रमशः.....६ पर

परमात्मा का अस्तित्व

-पं० रामचन्द्र देहलवी

हम संसार में जो कुछ भी कार्य करते हैं, वे सब उस परमपिता परमात्मा के द्वारा किये गये कार्यों की नकल ही है । अपने द्वारा किये गये समस्त क्रिया-कलापों से ही हम उस परमपिता को जान और पहचान सकते हैं ।

आप जगत का कोई भी पदार्थ लिजिये, उसको बनाने वाला कोई न कोई अवश्य है। मकान, कपड़ा, पुस्तक आदि को भी बनाने वाला कोई न कोई अवश्य है । यहाँ यह बात विचारणीय है कि क्या जड़ पदार्थ स्वंय कोई क्रिया कर सकता है ?

कोई भी जड़ वस्तु स्वयं चलकर अपने स्थान परिवर्तन कर सकते हैं ? यदि स्थान परिवर्तन होता है, तो आप तुरन्त पूछेगें कि अमूक वस्तु किसने हटायी ? इन बातों से सिद्ध है कि संसार के सभी पदार्थ परतन्त्र है, अर्थात प्रबन्ध के आधीन है ।

रेलवे स्टेशन पर यदि कोई बच्चा अपने पिता से बिछड़ जाये तो पिता के पुकारने पर वो तुरन्त बोल पड़ता है, परन्तु यदि कोई जड़ वस्तु रेलगाड़ी में छूट जाये, तो किसी के पुकारे जाने पर भी उत्तर नहीं देगा । यदि कोई पुकारेगा तो अन्य सभी उसे पागल ही समझेगा कि जड़ वस्तु को पुकार रहा है ।

अपने दैनिक व्यवहारों से ही हम भगवान के कार्यों को अर्थात उसके अस्तित्व को पहिचानते तथा मानते हैं ।

एक बार मैं रात्रि के समय आर्यसमाज की अंतरंग सभा के अधिवेशन में जा रहा था, तो समय पर अपनी हाथ की छड़ी मुझे नहीं मिली अन्ततः मैं बिना छड़ी के ही चला गया, वापस लौटा, तो घर पर सब बच्चे सो गये थे ।

प्रातःकाल होने पर मैंने अपने दौहित्र से पूछा, "मेरी छड़ी तुमने कहीं रखी है क्या ?"

वह बोला, "नहीं .... ।"

फिर उसकी छोटी बहन से पूछा, उसने भी यही कहा, "मैंने नहीं उठाई ।"

फिर मैंने इन दोनो बच्चों की मां अर्थात अपनी बेटी से पूछा, वह बोली, "पिताजी मुझे भी मालूम नहीं है।"

अब अन्त में मैं स्वयं ही शेष रह गया और मैंने भी उसे कहीं भी उठाकर नहीं रखा था ।

इसके पश्चात् मैं बच्चों से बोला, मेरी छड़ी की आदत ही कुछ गड़बड़ हो गयी है, वह मुझे बिना बताये ही कहीं पर चली जाती है।"

यह सुनकर छोटी लड़की तुरन्त बोल उठी, "नानाजी ! ऐसा कभी नहीं हो सकता है, छड़ी अपने आप कहीं नहीं जा सकती है, भइया ही छड़ी से बन्दरों को भगाया करते हैं, इन्होंने ही उठायी होगी। छड़ी अपने आप कहीं नहीं जा सकती है।"

अब आपने देख लिया कि एक छोटा-सा बच्चा भी इस बात को जानता है कि संसार में जड़ पदार्थ स्वयं कोई क्रिया नहीं कर सकता है, क्योंकि वह परतंत्र है ।

इसी प्रकार के अपने दैनिक व्यवहार के कार्यों से हम परमात्मा के कार्यों को पहचानते हैं और उसकी सत्ता को अपने मस्तिष्क में अनुभव करते हैं । संसार का कोई भी जड़ पदार्थ आज तक स्वयं नहीं बना, बल्कि उसे बनाने वाला अन्य कोई अवश्य है, परन्तु जगत का रचयिता वह परमात्मा है।

कुछ लोग कहते हैं कि सूर्य, चन्द्र, समुद्र, नदी, वायु, अग्नि को प्रकृति स्वंय बना लेती है । यदि ऐसा है तो वह जमीन बनाने के बाद क्यों रूक जाती है ? आगे घड़ा, तश्तरी आदि क्यों नहीं बना देती ?

अपितु ज्ञानी परमात्मा ही यह सब बनाता है । मनुष्य की सामर्थ्य जहां तक नहीं पहुँच सकती थी, वहां तक उस ज्ञानी परमात्मा ने इस सृष्टि को बनाया और उसके बाद फिर मनुष्य बनाता है ।

-(पण्डित रामचन्द्र देहलवी और उनका जीवन दर्शन पुस्तक से साभार)

प्रस्तुति-पं. दीनानाथ शास्त्री

वेदामृतम्

यदा कदा च मोढुषे, स्तोता जरेत मर्त्यः।
आदिद् वन्देत वरुणं विपा गिरा, धर्तारं विव्रतानाम्।।

मनुष्य मर्त्य है, मरणधर्मा है, मृत्यु के बन्धन से बंधा हुआ ही वह उत्पन्न होता है। न जाने कब मृत्यु आ जाए, जितना जल्दी हो सके भजन-पूजन आदि कर लो, यह सोच उसे प्रभु की अर्चना में तत्पर होना है। एक कवि ने कहा है कि मृत्यु ने हमें केशों से पकड़ रखा है यह मानकर मानव धर्म-कर्म में प्रवृत्त हो। अतः मनुष्य इन्द्र प्रभु की अर्चना करता है। इन्द्र 'मीढ्वान्' है, कामवर्षी है, आराधक पर सुख-समृद्धि की वर्षा करनेवाला है। वह उपासक को अपने दिये हुए ऐश्वर्यो से निहाल कर देता है। अतः जो इन्द्र की स्तुति करेगा, उसके पास अपार ऐश्वर्य का भण्डार भर जायेगा। परन्तु परमेश्वर का ऐश्वर्य- वर्षक के अतिरिक्त दूसरा रूप भी है, वह है 'वरुण' का रूप। वेद कहता है कि जब भक्त कामवर्षी इन्द्र की स्तुति करे, उसके अनन्तर वह वरुण की भी वन्दना कर लिया करे । 'वरुण' पाशी है, उसके सैकड़ों पाश हैं, जिनसे वह अनृत आचरणवाले को बांधता है। वह सबको समीप से देख रहा है। कोई भी कुकर्म करने पर मनुष्य वरुण की आँख से बच नहीं सकता। वह उसे अपने पाशों में जकड़ लेता है। कुकर्म का कुफल भोगने के अनन्तर ही मनुष्य उन पाशों से छूट सकता है। इसीलिए मन्त्र में कहा गया है कि वरुण 'विव्रतों का धारण करनेवाला है। 'विव्रत' वे हैं, जिन्होंने अपने जीवन में कोई उच्च व्रत धारण नहीं किया, या व्रत-ग्रहण करके प्रलोभन आने पर उसे भंग कर दिया है, अथवा जो वेद-विरुद्ध कर्म करनेवाले हैं। उन्हें वरुण अपने दण्ड के बन्धनों से बद्ध कर लेता है। उपासक परमेश्वर के इन्द्र-रूप चिन्तन के साथ उसके वरुण-रूप का भी चिन्तन कर लिया करेगा, तो वह ऐश्वर्य के मद से उन्मत्त होकर दुष्कर्म में प्रवृत्त नहीं होगा।

हे इन्द्र ! हे वरुण ! हम तुम-दोनों का स्तवन करते हैं, तुम दोनों का वन्दन करते हैं।

साभार-वेदमंजरी

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

पंकज जायसवाल
मंत्री/सम्पादक

आर्य शिवशंकर वैश्य
प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

श्रीमद्दयानन्द सरस्वती की प्रथम जन्म शताब्दी के शुभ अवसर पर फरवरी 1925 में

राजाधिराज श्री सर नाहर सिंह जी वर्मा का आर्यकुमार सम्मेलन में भाषण

''आज दिन तक जितने अवतार, जितने आचार्य, जितने वीर, जितने सम्राट् व लाट हुए हैं उन सबों ने अपने जीवन काल की भावी उन्नति के साधनों को कुमारावस्था में प्राप्त किया है अतएव सभी अवस्थाओं में यह कुमारावस्था ही सर्वोत्तम है। कुमारगण ही देश, जाति वा धर्म के संरक्षक हैं। जिस देश व जाति के कुमार सदाचारी, विद्यानुरागी और सत्कर्मानुयायी होते हैं वह देश तथा जाति उन्नत होती है और इसके विपरीत बिगड़ जाती है। महर्षिवर श्री दयानन्द सरस्वती जी जब मुझपर कृपा करके शाहपुर पधारे थे तो उन्होंने मुझे यह बतलाया कि आर्यधर्म जो शिथिल हो चला है और देश दीनावस्था को पहुँच रहा है इसका मुख्य कारण एतद्देशीय कुमारों की दीनता है। इस देश में अब तक ब्रह्मचर्य व्रत-पालन-परिपाटी, स्वाध्याय और सदाचार के नियम नहीं पाले जाते जिससे हमारा देश निर्वल, मूर्ख और धर्महीन होता जा रहा है इसलिये देश, धर्म और जाति के कल्याणकारी आप कुमार ही हैं। वर्त मान काल में जो आपके वृद्ध नेता कार्य कर रहे हैं वे इस आशा पर कर रहे हैं कि हमारा कुमार-समूह तैयार हो रहा है, वह हमारे मस्तक का भार उतार लेगा। मैं आशा करता हूँ कि यह परिषद् उनकी आशा पूर्ण करेगी ।

आर्यकुमार परिषद् क्या है? मेरी समझ में वह सच्चा आर्य बनने का सांचा है। इस परिषद् के द्वारा ही हम ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' का सिद्धान्त पालन कर सकेंगे या यों समझिये कि यह वह नर्सरी है कि जिसमें आर्य कल्पतरु के पौधे पाले जाते हैं। मैं कुमार परिषद् के कुमारों से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने पर बड़ी भारी जिम्मेदारी का काम उठा चुके हैं। उस कार्य को सिद्ध करने के लिए वेद भगवान् की आज्ञाओं का पालन कर ब्रह्मचर्य आदि महाव्रतों का पालन परमावश्यक है, क्योंकि कुमारवृन्द देश के भाग्य-निर्माण की सामग्री हैं। ब्रह्मचर्य से ही धर्म कमाया जाता है। आयुर्वेद की नीति से सिद्ध है कि बिना ब्रह्मचर्य के शारीरिक दिव्य शक्ति प्राप्त नहीं होती और शारीरिक शक्ति के बिना धर्म का साधन नहीं होता। कहा भी है. ''शरीरमाय' खलु धर्मसाय-नम्'' यह शरीर धर्म अर्थ काम मोक्षादि फलचतुष्श्य के लिए होता है। इस लिए अखण्ड सुख प्राप्ति के लिए पहला सोपान ब्रह्मचर्याश्रम ही है।

''कुमारगण ! आर्य संसार टकटकी लगाकर आपकी ओर देख रहा है। क्योंकि फूल मुरझाने वाले होते हैं और बीज में फलों की आशा रहती है। आप लोगों पर ही देश व धर्म के उद्धार का भार है। इसलिए आप लोग वीर बर्ने, सच्चे धर्मात्मा बनें, ब्रह्मचारी बनें, परोपकारी बनें और आपकी भावी सन्तानें भारत का मुख उज्ज्वल करने वाली हों। उनके द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार हो और विश्वमात्र का उपकार हो।''

राष्ट्र रक्षा यज्ञ श्रृंखलाबद्ध तरीके से सम्पन्न

आर्य समाज बुढ़ाना द्वार का कार्यक्रम जो राष्ट्र रक्षा यज्ञ श्रृंखला एवं महर्षि दयानंद सरस्वती की २००वी जयंती की श्रृंखला में पारिवारिक यज्ञ एवं वेद प्रचार समारोह का कार्यक्रम ४ सितंबर से ८ सितंबर तक हुआ और जिसमें सभी आर्य समाजों ने उत्साह से भाग लिया और मुझे सभी आर्य समाजों के पदाधिकारी एवं भद्र पुरुषों एवं मातृशक्ति एवं अपने आर्य समाज बुढ़ाना के द्वारा सभी पदाधिकारी एवं सभी सदस्यों को कार्यक्रम को सफल बनाने में जो उन्होंने सहयोग दिया उसके लिए मैं आप सभी को हार्दिक धन्यवाद देता हूं और महर्षि दयानंद द्वारा जिन कार्यों के लिए आर्य समाज की स्थापना की थी उन्हें आगे बढ़ाने के लिए आपके सहयोग की अपेक्षा रखता हूं मैं फिर एक बार आप सभी का धन्यवाद देता हूं

संजय गुप्ता
मंत्री, आर्य समाज बुढ़ाना गेट

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्दशसमुल्लासारम्भः

अथ यवनमतविषयं व्याख्यास्यामः

७८-प्रश्न करते हैं तुझ को लूटों से कह लूटें वास्ते अल्लाह के और रसूल के और डरो अल्लाह से॥

-मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० १॥

(समीक्षक) जो लूट मचावें, डाकू के कर्म करें करावें और खुदा तथा पैगम्बर और ईमानदार भी बनें, यह बड़े आश्चर्य की बात है और अल्लाह का डर बतलाते और डाकादि बुरे काम भी करते जायें और 'उत्तम मत हमारा है' कहते लज्जा भी नहीं। हठ छोड़ के सत्य वेदमत का ग्रहण न करें इस से अधिक कोई बुराई दूसरी होगी ? ॥ ७८ ॥

७९-और काटे जड़ काफिरों की॥ मैं तुम को सहाय दूंगा। साथ सहस्त्र फरिश्तों के पीछे पीछे आने वाले॥ अवश्य मैं काफिरों के दिलों में भय डालूंगा। बस मारो ऊपर गर्दनों के मारो उन में से प्रत्येक पोरी (सन्धि) पर॥

-मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० ७।९।१२ ॥

(समीक्षक) वाह जी वाह! कैसा खुदा और कैसे पैगम्बर दयाहीन। जो मुसलमानी मत से भिन्न काफिरों की जड़ कटवावे। और खुदा आज्ञा देवे उन की गर्दन पर मारो और हाथ पग के जोड़ों को काटने का सहाय और सम्मति देवे ऐसा खुदा लंकेश से क्या कुछ कम है? यह सब प्रपूंच कुरान के कर्तृता का है, खुदा का नहीं। यदि खुदा का हो तो ऐसा खुदा हम से दूर और हम उस से दूर रहें॥ ७९ ॥

८०-अल्लाह मुसलमानों के साथ है॥ ऐ लोगो जो ईमान लाये हो पुकारना स्वीकार करो वास्ते अल्लाह के और वास्ते रसूल के॥ ऐ लोगो जो ईमान लाये हो मत चोरी करो अल्लाह की रसूल की और मत चोरी करो अमानत अपनी की ॥ और मकर करता था अल्लाह और अल्लाह भला मकर करने वालों का है।

- मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० १९।२०। २९ । ३० ॥

(समीक्षक) क्या अल्लाह मुसलमानों का पक्षपाती है, जो ऐसा है तो अधर्म करता है। नहीं तो ईश्वर सब सृष्टि भर का है। क्या खुदा बिना पुकारे नहीं सुन सकता। बधिर है? और उस के साथ रसूल को शरीक करना बहुत बुरी बात नहीं है? अल्लाह का कौन सा खजाना भरा है जो चोरी करेगा? क्या रसूल और अपने अमानत की चोरी छोड़कर अन्य सब की चोरी किया करे? ऐसा उपदेश अविद्वान् और अधर्मियों का हो सकता है? भला ! जो मकर करत। और जो मकर करने वालों का संगी है वह खुदा कपटी, छली और अधर्मी क्यों नहीं ? इसलिये यह कुरान खुदा का बनाया हुआ नहीं है। किसी कपटी छली का बनाया होगा। नहीं तो ऐसी अन्यथा बातें लिखित क्यों होतीं ? ॥ ८० ॥

८१-और लड़ो उन से यहां तक कि न रहे फितना अर्थात् बल काफिरों का और होवे दीन तमाम वास्ते अल्लाह के॥ और जानो तुम यह कि जो कुछ तुम लूटो किसी वस्तु से निश्चय वास्ते अल्लाह के है पाँचवाँ हिस्सा उस का और वास्ते रसूल के॥

- मं० २ । सि० ९। सू० ८। आ० ३९।४१ ॥

(समीक्षक) ऐसे अन्याय से लड़ने लड़ाने वाला मुसलमानों के खुदा से भिन्न शान्तिभङ्गकर्ता दूसरा कौन होगा ? अब देखिये यह मजहब कि अल्लाह और रसूल के वास्ते सब जगत् को लूटना लुटवाना लुटेरों का काम नहीं है? और लूट के माल में खुदा का हिस्सेदार बनना जानो डाकू बनना है और ऐसे लुटेरों का पक्षपाती बनना खुदा अपनी खुदाई में बट्टा लगाता है। बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसा पुस्तक, ऐसा खुदा और ऐसा पैगम्बर संसार में ऐसी उपाधि और शान्तिभङ्ग करके मनुष्यों को दुःख देने के लिये कहां से आया? जो ऐसे-ऐसे मत जगत् में प्रचलित न होते तो सब जगत् आनन्द में बना रहता॥ ८१ ॥

८२-और कभी देखे तू जब काफिरों को फरिश्ते कब्ज करते हैं, मारते हैं, मुख उन के और पीठें उन की और कहते चखो अजाब जलने का। हम ने उन के पाप से उन को मारा और हम ने फिराओन की कौम को डुबा दिया॥ और तैयारी करो वास्ते उन के जो कुछ तुम कर सको॥

-मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० ५०/५४।६०॥

(समीक्षक) क्यों जी! आजकल रूस ने रूम आदि और इंग्लैण्ड ने मिश्र की दुर्दशा कर डाली, फरिश्ते कहां सो गये ? और अपने सेवकों के शत्रुओं को खुदा पूर्व मारता डुबाता था यह बात सच्ची हो तो आजकल भी ऐसा करे जिस से ऐसा नहीं होता इसलिये यह बात मानने योग्य नहीं ? अब देखिये ! यह कैसी बुरी आज्ञा है कि जो कुछ तुम कर सको वह भिन्न मत वालों के लिये दुःखदायक कर्म करो। ऐसी आज्ञा विद्वान् और धार्मिक दयालु की नहीं हो सकती। फिर लिखते हैं कि खुदा दयालु और न्यायकारी है। ऐसी बातों से मुसलमानों के खुदा से न्याय और दयादि सद्गुण दूर बसते हैं॥ ८२ ॥

८३-ऐ नबी किफायत है तुझ को अल्लाह और उन को जिन्होंने मुसलमानों से तेरा पक्ष किया॥ ऐ नबी रगबत अर्थात् चाह चस्का दे मुसलमानों को ऊपर लड़ाई के, जो हों तुम में से २०आदमी सन्तोष करने वाले तो पराजय करें दो सौ का॥ बस खाओ उस वस्तु से कि लूटा है तुमने हलाल पवित्र और डरो अल्लाह से वह क्षमा करने वाला दयालु है।

मं०२। सि० १०। सू० ८। आ० ६४।६५।६९॥

(समीक्षक) भला यह कौन सी न्याय, विद्वत्ता और धर्म की बात है कि जो अपना पक्ष करे और चाहें अन्याय भी करे उसी का पक्ष और लाभ पहुँचावे ? और जो प्रजा में शान्तिभङ्ग करके लड़ाई करे करावे और लूट मार के पदार्थो को हलाल बतलावे और फिर उसी का नाम क्षमावान् दयालु लिखे यह बात खुदा की तो क्या किन्तु किसी भले आदमी की भी नहीं हो सकती। ऐसी-ऐसी बातों से कुरान ईश्वरवाक्य कभी नहीं हो सकता॥ ८३ ॥

८४-सदा रहेंगे बीच उस के, अल्लाह समीप है उस के पुण्य बड़ा॥ ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हो मत पकड़ो बापों अपने को और भाइयों अपने को मित्र जो दोस्त रखें कुफ्र को ऊपर ईमान के॥ फिर उतारी अल्लाह ने तसल्ली अपनी ऊपर रसूल अपने के और ऊपर मुसलमानों के और उतारे लश्कर नहीं देखा तुम ने उन को और अजाब किया उन लोगों को और यही सजा है काफिरों को॥ फिर-फिर आवेगा अल्लाह पीछे उस के ऊपर॥ और लड़ाई करो उन लोगों से जो ईमान नहीं लाते॥

- मं० २। सि० १०० सू० ९। आ० २२।२३।२६ । २७॥

(समीक्षक) भला जो बहिश्तवालों के समीप अल्लाह रहता है तो सर्वव्यापक क्योंकर हो सकता है? जो सर्वव्यापक नहीं तो सृष्टिकर्ता और न्यायाधीश नहीं हो सकता। और अपने माँ, बाप, भाई और मित्र को छुड़वाना केवल अन्याय की बात है। हां! जो वे बुरा उपदेश करें, न मानना परन्तु उन की सेवा सदा करनी चाहिये। जो पहिले खुदा मुसलमानों पर बड़ा सन्तोषी था और उनके सहाय के लिए लश्कर उतारता था सच हो तो अब ऐसा क्यों नहीं करता ? और जो प्रथम काफिरों को दण्ड देता और पुनः उसके ऊपर आता था तो अब कहाँ गया ? क्या विना लड़ाई के ईमान खुदा नहीं बना सकता ? ऐसे खुदा को हमारी ओर से सदा तिलांजलि है, खुदा क्या है एक खिलाड़ी है ? ॥ ८४॥

क्रमशः अगले अंक में...

वेदों का दार्शनिक महत्त्व

–स्वामी दर्शनानन्द जी

प्यारे मित्रों! आप एक और भी ध्यान रखें कि जिस समय संसार में सूर्य की किरणें आनी आरम्भ होती हैं तो अन्धेरा एकदम से उड़ जाता है लेकिन दीपकों के प्रकाश से अन्धेरा बहुत कम उड़ता है और उसका प्रकाश दूर तक नहीं पहुंचता, इसलिये जिस पुस्तक से संसार की सम्पूर्ण मूर्खता नष्ट हो जाय और मनुष्यों में से द्वेष भाव हटकर एकता पैदा हो जाय वही ईश्वरकृत पुस्तक है। अब हम वेद में इन्हीं बातों की ढूंढ (खोज) करेंगे। यदि इस समय देश में देखा जाय कि कितनी बातें ऐसी हैं कि जिनके कारण मनुष्य आपस में भाई-भाई होने पर भी और बुद्धिमान् हो करके भी एक दूसरे के दुःखदाई शत्रु बन रहे हैं, जब हम भले प्रकार सोचते हैं तो ज्ञात होता है कि पहिली बात जिसने संसार को टुकड़ा-टुकड़ा किया ईश्वर के न मानने का है। जो लोग नास्तिक हैं वे ईश्वर का होना नहीं मानते। दूसरी बात ईश्वर की गणना की है अर्थात् ईश्वर एक है या अनेक? क्योंकि ईसाई तीन मानते हैं बाप, बेटा और पवित्र आत्मा। यवन एक मानते हैं। हिन्दू तीन मानते हैं, अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव। जैनी २४ मानते हैं, वरन् इससे भी अधिक, और आर्य एक मानते हैं। सारांश यह है कि इस बात में भिन्नता है।

तीसरा झगड़ा ईश्वर के स्थान का है अर्थात् ईश्वर कहाँ है? कोई सातवें आकाश पर मानता है अर्थात् यवन। ईसाई चौथे आकाश पर मानते हैं। जैनी मोक्षशिला (सिद्ध शिला) पर मानते हैं। हिन्दू वैकुण्ठ में मानते हैं। कोई क्षीर सागर में मानता है, कोई गोलोक में मानता है, शैवी कैलाश पर मानते हैं, सारांश यह कि इस बात में बड़ी-बड़ी भिन्नता विद्यमान हैं। चौथा झगड़ा इस बात का है कि ईश्वर कर्मों का फल किस प्रकार देता है? जैनी तो ईश्वर को फलदाता मानते ही नहीं। यवन कहते हैं कि ''मुनकिर और नकीर'' फरिश्ते कबर (समाधि) पर आकर मृतक से प्रश्न करते हैं और कयामत के दिन उनका हिसाब होता है। ईसाई भी कयामत के मानने वाले हैं। और हिन्दुओं का यह मत है कि यमदूत उसको यम लोक में ले जाते हैं। वहां चित्रगुप्त यमराज का मीर मुन्शी बही-खाता लिखता रहता है और उसके अनुसार हिसाब होकर कर्म फल दिया जाता है। तात्पर्य यह है कि इस बात में और भी बहुत-सी भिन्नतायें हैं। पांचवां झगड़ा इस बात का है कि ईश्वर ने संसार को किस वस्तु से पैदा किया। यवन कहते हैं कि अवस्तु से वस्तु को उत्पन्न किया अर्थात् 'कुन', कहते ही सब सृष्टि उत्पन्न हो गई। ईसाई भी अवस्तु से वस्तु मानने वालों के साथी हैं। जैनी तो उसकी उत्पत्ति मानते ही नहीं। हिन्दुओं में भी इस बात में बड़ी भिन्नता है। कोई तो अविद्या से जगत् की उत्पत्ति मानता है, कोई पंच भूतों से। तात्पर्य यह है कि यह बात भी झगड़े में पड़ी हुई है। छठा झगड़ा इस बात का है कि जीव और ईश्वर में भेद है या नहीं? यवन तो हमेओस्त (सर्वव्यापक) के मानने वाले हैं, हिन्दुओं में विशिष्टाद्वैत, अद्वैत, शुद्धाद्वैत इत्यादि बहुत प्रकार की भिन्नता है। सातवां झगड़ा इस बात का है कि अनादि पदार्थ कितने हैं। यवन एक, हिन्दू भिन्न-भिन्न, ईसाई तीन, जैनी सब संसार को अनादि मानते हैं। आठवां झगड़ा वह है जो इन सब झगड़ों की जड़ है। वह है कि मुक्ति किस प्रकार हो सकती है? जैनी कर्म से, यवन प्रार्थना से, ईसाई कुफारा से, हिन्दू उपासना-ज्ञान-कर्म इत्यादि भिन्न-भिन्न नियमों से मुक्ति मानते हैं।

प्यारे पाठकगण! ये आठ झगड़े हैं जिसके कारण इस समय संसार में आत्मिक और शारीरिक दोनों प्रकार की लड़ाई हो रही है। अब देखना यह है कि वैदिक शिक्षा इन आठ झगड़ों को दूर कर सकती है या नहीं? मैं इस समय केवल उपनिषद् का एक वाक्य जो ऋग्वेद के एक मन्त्र का स्पष्ट अनुवाद है प्रस्तुत करता हूं-

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं रूपं बहुधा यः करोति। तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतन्नेतरेषाम्।।१२।।

पहिला प्रश्न यह था कि ईश्वर है या नहीं। दूसरा यह था कि ईश्वर एक है या अनेक। उसका उत्तर मिला कि एक है, क्योंकि नहीं का उत्तर 'है' कहने से और बहुत का उत्तर 'एक' कहने से आ गया। अब प्रश्न उत्पन्न हुआ कि एक क्यों है! और वह कहां है? उसका उत्तर मिला कि सर्वव्यापक है, क्योंकि जहां दो होंगे वहां बीच की दूरी अवश्य होगी और जहां दूरी हो वह परिमित होगा, इसलिये जो परमात्मा अनन्त है वह एक ही है और उसमें झगड़ा भी मिट गया कि वह कहां है, क्योंकि चौथे-सातवें आकाश या वैकुण्ठ, क्षीर सागर इत्यादि में मानने से परिमित हो जाता है। फिर प्रश्न उत्पन्न हुआ कि कहां व्यापक है। उसका उत्तर मिला कि (सर्वभूतान्तरात्मा) अर्थात् कुल जीवों और पदार्थों के भीतर विद्यमान है और ऐसा कहने से इस प्रश्न का उत्तर ही मिल गया कि ईश्वर कर्मों का फल किस प्रकार देते हैं अर्थात् वह प्रत्येक जीवात्मा के भीतर सब के कर्मों का साक्षी होकर देखता है और स्वयं ही उनका फल देता है। बहुत-से मित्र कहेंगे कि हिन्दुओं के यमलोक का सिद्धान्त क्यों न माना जाय लेकिन याद रहे कि एजेण्ट, पैगम्बर या दूत का मानना परिमित होने के रोग का निदान है, चूंकि परमेश्वर को यह रोग नहीं इसलिये उसके एजेण्ट या कारिन्दा, दूत इत्यादि कोई नहीं है। और न उसके दूत माने जा सकते हैं, क्योंकि जहां परमात्मा स्वयं विद्यमान न हो वहां पर उसके पैगम्बर, एजेण्ट और दूत काम करते हैं। इसलिये ऐसा कहने से सिवाय परमात्मा की अप्रतिष्ठा करने के और कोई लाभ नहीं। बही-खाते का रखना यह भूल के रोग की चिकित्सा है। क्योंकि परमात्मा को भूल का रोग नहीं है इसलिये उसके दरबार में लिखने का कोई काम नहीं। यह केवल सांसारिक राजाओं की जो थोड़े ज्ञान और थोड़ी शक्ति वाले हैं आवश्यकता है। कुछ मित्र यह कहेंगे कि 'मुनकिर' 'नकीर' के प्रश्नोत्तर को क्यों न मान लिया जाय? प्रथम तो यह वाक्य इस बात से मिथ्या है कि जब जीव शरीर से निकल जाता है तब उसको कबर में गाड़ते हैं। उस समय जो प्रश्न कबर पर किये जावेंगे वे शरीर से होंगे न कि जीव से। दूसरे, प्रश्न वह मनुष्य करता है जिसको उत्तर मिलने से पहले उसका ज्ञान नहीं होता, चूंकि ईश्वर सबका जानने वाला है इसलिये उस पर प्रश्न तथा उत्तर का अभियोग लगाना भी ठीक नहीं। तीसरे कयामत का सिद्धान्त तो सर्वांश में मिथ्या है, क्योंकि प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जीव मर कर कुल एक स्थान पर जाते हैं या अलग-अलग स्थानों पर? यदि कहो कि एक स्थान पर तो भलों को बुरों के साथ में बन्दीगृह में रखना ईश्वर के न्याय पर धब्बा है। यदि कहो कि नेकों को अच्छे स्थान पर भेजा जाता है और बुरों को दूसरे स्थान पर, तो बस समझो कि न्याय यहीं हो चुका, कयामत की आवश्यकता ही नहीं रही। यह सिद्धान्त तो केवल मूर्ख लोगों ने संसारी बादशाहों के बन्दीगृहों और कारागार को देखकर गढ़ लिया है, क्योंकि दुनिया में न्याय तिथि तक अपराधी बन्दीगृह में रहता है और उसके पश्चात् या तो वह छूट जाता है या कारागार में भेजा जाता है। पांचवां झगड़ा यह है कि ईश्वर ने संसार को किस वस्तु से बनाया? कुछ तो यह कहते हैं कि ईश्वर ने संसार को उत्पन्न ही नहीं किया, जैसा कि जैनी और बौद्ध, परन्तु उनका यह कहना ठीक नहीं, क्योंकि बदलने वाली वस्तु अनादि नहीं हो सकती और यह दुनिया बदलने वाली है, इसलिये यह अनादि तो नहीं हो सकती। अब यवन कहते हैं कि असत् से सत् में आ गये परन्तु उनका यह कहना भी मिथ्या है, क्योंकि अवस्तु से वस्तु की उत्पत्ति या आग से सर्दी की उत्पत्ति मानना बुद्धि और ज्ञान के विरुद्ध है, परन्तु हमारे यवन भाई कहते हैं कि जब ईश्वर ने 'कुन' कहा तो दुनिया उत्पन्न हो गई। यहां पर सोचना चाहिए कि 'कुन' किसको कहा, क्योंकि 'कुन' विधि है और आज्ञा दूसरे पर होती है। जब दूसरा है ही नहीं तो 'कुन' कहना नितान्त झूठ हो गया। बहुत से हिन्दू कहते हैं कि अविद्या से जगत् बन गया परन्तु यह सिवाय ईश्वर के किसी दूसरी वस्तु को मानते ही नहीं, अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि तुम्हारी अविद्या कोई वस्तु है या नहीं। यदि कहें कोई वस्तु है तो स्वयं उनका सिद्धान्त मिथ्या हो गया क्योंकि वस्तु नहीं तो अवस्तु से वस्तु की उत्पत्ति हो नहीं सकती। इन सारी अशुद्धियों को देखकर वेद ने उनके दूर करने के लिए उत्तर दिया कि 'जो एक सूक्ष्म प्रकृति से अर्थात् वस्तुओं के परमाणुओं से बहुत प्रकार की स्थूल वस्तुएं बनाता है।'

छठा झगड़ा संसार में यह पड़ा हुआ है कि जीव और ब्रह्म एक हैं या अलग-अलग? इसका उत्तर दिया गया कि उस आत्मा में रहने वाले को, अर्थात् जीव और ईश्वर का आधार-आधेयभाव सम्बन्ध है, सम्बन्ध सदैव दो में होता है इसलिये जीव और ब्रह्म दो पदार्थ हैं।

सातवां झगड़ा यह था कि पदार्थ अनादि कितने हैं, उत्तर मिला जो उसके भीतर दीखते हैं अर्थात् देखने वाला जीव और देखने की वस्तु प्रकृति और उसके भीतर देखने के योग्य परमात्मा यह तीन पदार्थ ही अनादि हैं।

फिर प्रश्न यह था कि मुक्ति किस प्रकार हो सकती है? उत्तर मिला, जो ईश्वर एक सारे जगत् में व्याप्त रूप सब की आन्तरिक अवस्था को जानने वाला और अपने आप कर्म का फल देने वाला प्रकृति से जगत् का उत्पादक और जीव ब्रह्म का भेद, इन तीन पदार्थों को अनादि मानते हैं उन्हीं की मुक्ति हो सकती है दूसरों की नहीं। प्यारे पाठकगण! हमारे मित्र बहुधा कह उठेंगे कि तुम्हारी मुक्ति उसी तरह की है जिस तरह की ईसाई कहते हैं कि ईसामसीह पर विश्वास लाने से मुक्ति होती है। मुसलमान मुहम्मद के अनुग्रह से मुक्ति मानते हैं, लेकिन उनका यह कहना भी ठीक नहीं, क्योंकि यह तो प्रत्येक मनुष्य जानता है कि जिस स्थान पर पुलिस अफसर मौजूद हो वहां पर कोई भी चोरी नहीं करता जबकि उसको विश्वास हो कि मैं घूंस देकर बच नहीं सकता। इसी तरह जो मनुष्य ईश्वर को सब स्थानों में और सब कर्मों का फल देने वाला मानता है वह कहीं भी पाप नहीं कर सकता, फिर उसे कष्ट किस तरह हो सकता है! और जो ईश्वर को परिमित मानते हैं उनके मत में तो ईश्वर का होना न होना बराबर है और प्रकृति से जगत् की उत्पत्ति मानने का तात्पर्य यह है कि जिससे ज्ञात रहे कि इस जगत् में आनन्द नहीं क्योंकि सत् प्रकृति है, सत्वित् जीव अर्थात् आत्मा और सत्वित् आनन्द परमात्मा है। जब प्रकृति सत् ठहरी और जगत् उसका कार्य है तो जगत् से आनन्द की इच्छा करना ठीक नहीं और तीन पदार्थों के नित्य मानने से यह लाभ है कि प्रकृति की उपासना से दुःख होता है और परमात्मा की उपासना से सुख होता है। और जीव, सुख-दुःख और बन्ध-मोक्ष दोनों से भिन्न साक्षीरूप है। और संसार के जितने मत हैं सब में इस बात के अज्ञान से सहस्त्रों त्रुटियां हो गईं कि पाप कौन कराता है, पुण्य कहां से होता है। परन्तु उचित उत्तर नहीं था, वैदिक धर्म ने उसका उत्तर ऐसा दिया कि अब कहने का अवकाश नहीं अर्थात् प्रकृति संसर्ग से मूर्खता और पाप उत्पन्न होता है जिसका फल दुःख है और परमात्मा के संसर्ग से पुण्य उत्पन्न होता है जिसका फल सुख है।

शिवो वै आचार्य

–आचार्य दयाशंकर

भारतीय वैदिक तथा लौकिक संस्कृत साहित्य के साथ अत्यधिक छेड़छाड़ की गई है जिसका दुष्परिणाम बहुत विकृत रूप में देखने को मिल रहा है। हमारे वैदिक मौलिक ग्रन्थों को मूलभूत सिद्धान्तों एवं मान्यताओं से दूर अवैदिक वेद-विरूद्ध तथा विपरीत मार्ग की ओर ले जाकर वैदिक कर्मकाण्ड तथा धार्मिक मान्यताओं की धज्जियां ही उड़ा डाली। वेदों की मूल संहिताओं के अतिरिक्त शायद ही कोई ऐसा ग्रन्थ बचा हो जो मौलिक तथ्यों के विपरीत अर्थों से अछूता रहा हो। चाहे वह वाल्मीकि रामायण हो अथवा व्यासकृत महाभारत। सभी ग्रन्थ प्रक्षिप्तता के शिकार हुए हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती– अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखते हैं-'व्यास जी ने चार सहस्र चार सौ और उनके शिष्यों ने पांच सहस्र छह सौ श्लोक युक्त अर्थात् सब दश सहस्र श्लोकों के प्रमाण महाभारत बनाया था। वह महाराजा विक्रमादित्य के समय बीस सहस्र। महाराज भोज कहते है कि मेरे पिताजी के समय पच्चीस और मेरी आधी तीस सहस्र श्लोक युक्त महाभारत का पुस्तक मिलता है। जो ऐसे ही बढ़ता चला तो महाभारत का पुस्तक एक ऊंट का बोझा हो जाएगा और ऋषि-मुनियों के नाम से पुराण आदि ग्रन्थ बनावेंगे तो आर्यावर्तीय लोग भ्रमजाल में पड़ वैदिक धर्मविहीन होके भ्रष्ट हो जायेंगे। इससे ज्ञात होता है कि हमारे धार्मिक ग्रन्थों के साथ बहुत अभद्र खिलवाड़ किया गया है। इसके दुष्परिणाम का फल ये है कि आज समस्त विश्व तथा विशेष रूप से भारतवर्ष अनेक प्रकार के पाखण्ड, पाषाण-पूजा, टोटके, जातिवाद, छुआछूत, मत-मतान्तरवाद, गुरूड़मवाद आदि-आदि के जंजाल में इस कदर जकड़ गया जिसका बाहर निकलना कठिन है। इसके अतिरिक्त यज्ञादि कर्मकाण्डों में नाना विधाएं जो प्रतीक तथा अलंकारिक रूप में कराई जाती है। उन प्रतिकात्मक विधाओं को न समझकर विपरीत अर्थ कर लेना, ऐसे ही शिव, गणेश आदि के चित्रों में निर्मित अलंकारों तथा प्रतीकों की वास्तविकता से विपरीत अनर्थ रूप में मानना और पूजा करना आदि। इस लेख में चित्रों में वर्णित प्रतीकों के विषय में कुछ चर्चा करेंगे।

आपने शिव की प्रतिमा को अवश्य देखा होगा। उसमें कुछ ऐसा चित्रित किया है जो सामान्यतः किसी भी महापुरुष के साथ मेल नहीं खाता। जैसे मस्तिष्क से गंगा का निकलना, बालों के स्थान पर लंबी-लंबी जटाएं, जटाओं के बीच दूज का चन्द्रमा, तीन आंखे, गले में सर्प, बैल की सवारी, पत्नी पार्वती (हिमालय पर्वत की पुत्री) त्रिशूल, डमरू धारण करना आदि-आदि। थोड़ा तो मस्तिष्क पर जोर दो, क्या ये सब सम्भव है? इस पृथ्वी से चन्द्रमा थोड़ा ही छोटा है तो क्या चन्द्रमा सिर के छोटे से भाग में आ सकता है? कुछ तो बुद्धि का उपयोग हमें करना चाहिए, इतना बडा चन्द्रमा, गंगा का इतना अथाह जल क्या मस्तिष्क में समा सकता है? नहीं, इसे थोड़ा समझने का प्रयत्न और इन सभी प्रतीकों को जानकर अनर्थ से अर्थ की ओर विचार करें। ये सभी चिह्न वास्तव में प्रतीक है। प्रतीक प्रायः किसी अन्य तथ्य की ओर संकेत मात्र होते हैं। इसको आप कुछ ऐसे समझें।

आप अपने आवास से रेलवे स्टेशन जाना चाहते हैं। मार्ग का पता नहीं। किसी भद्रपुरुष ने आपको स्टेशन की दिशा में चला तो दिया किन्तु वह आपके साथ-साथ नहीं चल सकता। आप चलते जा रहे हैं कि सामने एक चौराहा आ गया, वहां भी कोई मार्ग बताने वाला नहीं है। आपने देखा कि चारों मार्गों पर एक-एक पत्थर की शिलाएं गड़ी है। प्रत्येक शिला पर कुछ लिखा है, उन लिखे हुए शब्दों के नीचे तीर का निशान बना हुआ है। उनमें एक शिला पर लिखा है-'रेलवे स्टेशन। इसके ठीक नीचे वही तीर का चित्र भी अंकित है जो एक तरफ अपनी फाल किये हुए है। बुद्धिमान लोग संकेत समझ लेते हैं और उधर को चल पड़ते हैं जिधर तीर का फाल इशारा कर रहा है। अब विचार कीजिए, वह पत्थर की शिला बोल नहीं सकती, चुपचाप खड़ी है तो बुद्धिमान व्यक्ति उस तीर के फाल से सुगमता से समझ जाता है कि स्टेशन इधर है और अपने लक्ष्य पर पहुंच जाता है किन्तु मूर्ख और अज्ञानी उस पत्थर शिला पर रेलवे स्टेशन पढ़कर नीचे प्रतीक सांकेतिक चिह्न तीर के इशारे न समझते हुए, यही स्टेशन है ऐसा मानकर रेल की प्रतीक्षा में बैठ जाते हैं। वहां पर उन्हें रेल की प्रतीक्षा में सम्पूर्ण जीवन बीत जाता है मगर रेल नहीं मिलती, मिले भी कैसे, वह स्टेशन थोडे ही है।

नीचे वाला तीर का निशान जो संकेत कर रहा है, उससे वह अनभिज्ञ है और इसी अज्ञानता से अंधे हुए कुछ लोग यज्ञादि कर्मकाण्डों की विधाओं तथा अलंकारिक प्रतीकात्मक चित्रों के संदर्भ में कर रहे है। ऐसे लोगों को जीवन पर्यन्त कुछ फल नहीं मिलता उल्टा वे अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को बर्बाद कर रहे हैं। आज उसी शिव के विषय में कुछ चर्चा करेंगे और वास्तव में इन चिन्हों के पीछे क्या तथ्य छिपा है, यह बताने का प्रयास करेंगे। विज्ञ लोग समझ जाएंगे कि प्रतीकों तथा विधाओं के पीछे क्या रहस्य छिपा है, क्योंकि गोपथ ब्राह्मण में कहा गया है-'परोक्षप्रिया इव वै देवाः प्रत्यक्ष द्विषः' अर्थात् देव लोग (विद्वान) क्रियाकलाप के पीछे जो परोक्ष छिपा होता है उसके उपासक होते हैं, स्थूल दृष्टि से दृश्यमान कर्मकाण्ड के नहीं।

अब देखिए कि –

शिव प्रतिमा में चित्रित मस्तिष्क से प्रवाहित गंगा- वेद दर्शन आदि वेद वेदांग विषयों के मर्मज्ञ, त्याग, तप तथा आदर्श जीवनयुक्त ब्रह्मवेत्ता आचार्य ही शिव है जिसके मस्तिष्क रूपी पात्र में लौकिक तथा पारलौकिक ज्ञान-विज्ञान का अथाह सागर निहित है, जिस क्षण वह आचार्य उस ज्ञान का उपदेश कर लोगों को सन्मार्ग दर्शन कराता है, वही ज्ञान गंगा है। उस ज्ञान गंगा में जिसने भी स्नान कर लिया वही स्नातक कहलाता है। 'ज्ञानगंगायाम् कृतं स्नानं येन सः स्नातकः' वह स्नातक ज्ञान से विवेक सिद्ध सभी पापों से परे पवित्रात्मा हो जाता है। जैसे सूर्य की तपती धूप से तापित पवित्र शीतल जल से पूरित तालाब में प्रवेश कर ले तो सूर्य का प्रचण्ड ताप उसको सन्तप्त नहीं कर पाता जबकि सूर्य का ताप ज्यों का त्यों है किन्तु जल में प्रवेश करने से जलीय तत्त्व से युक्त शीतलता प्राप्त होने से बाह्य ताप निष्प्रभाव हो गया। ऐसे ही ज्ञानयुक्त आचार्य के सान्निध्य से ज्ञान प्राप्त कर पाप से छूट गया। इस प्रकार न जाने कितने पापी लोग आचार्य की ज्ञान गंगा में स्नान करके पवित्रात्मा बनें और जीवन को आध्यात्म की ओर मोड़ दिया। इसका प्रथम उदाहरण है-वाल्मीकि। कहा जाता है कि वाल्मीकि, रत्नाकर नाम के कुख्यात डाकू थे. कुछ ऋषियों के सम्पर्क में आए। उन्होंने उपदेश किया ज्ञान गंगा प्रवाहित हुई, वही डाकू ज्ञान गंगा में डूबकी लगाकर महर्षि वाल्मीकि बन गये। ऐसे पुण्यात्मा बने कि रामायण जैसे ऐतिहासिक ग्रन्थ की रचना कर आदिकवि कहलाए।

दूसरा उदाहरण- अंगुलिमाल।

मगध राज्य में सोनापुर नामक गांव के जंगलों में अंगुलिमाल नाम का डाकू रहता था। वह इतना क्रूर एवं अत्याचारी था कि लोगों को मारकर उनकी एक उंगली काट लेता था और उन उंगलियों की माला पहनता था। उस इलाके में सभी लोग उसके नाम से कांपते थे। स्वयं राजा अज्ञातशत्रु की हिम्मत भी उधर जाने की नहीं होती थी। महात्मा बुद्ध के कानों में भी यह बात पड़ी। महात्मा बुद्ध उस जंगल की ओर चल पड़े। लोगों ने बहुत मना किया किन्तु बुद्ध चलते रहे। बुद्ध को आते देख अंगुलिमाल हाथ में तलवार लेकर खड़ा हो गया। बुद्ध उसकी गुफा के आगे से निकल गये, पलट कर देखा तक नहीं। अंगुलिमाल तलवार लेकर उनकी ओर दौड़ा और बोला-रुक जाओ! महात्मा बुद्ध वैसे ही निडरता से आगे बढ़ते गये। अंगुलिमाल फिर चिल्लाया-ठहर जाओ नहीं तो खतरा है।

बुद्ध रुके और पलटकर स्नेह, करुणा भरी दृष्टि से अंगुलिमाल की ओर देखकर बोले-अंगुलिमाल मैं तो कब का ठहरा हुआ हूं। जब मन रुक गया तो मैं भी रुक गया। अब मैं तुझे कहता हूं, तू ठहर जा। तेरा मन बहुत पाप मार्ग की ओर दौड़ रहा है, आखिर तू कब ठहरेगा? अंगुलिमाल ने देखा। शान्त भाव से खडे सन्यासी ने जैसे ही आंख में आंखें डाली, अंगुलिमाल के भाव बदलने लगे। बुद्ध आचार्य का रूप धारण कर अपने ज्ञान की गंगा प्रवाहित कर रहे थे और अंगुलिमाल उसमें स्नान कर रहा था। अन्त में अंगुलिमाल ने सोचा कि इसे मारना असम्भव है। हिंसा पराजित हो रही थी और अंगुलिमाल के हृदय में अहिंसा का पवित्र भाव जाग्रत हुआ। किन्तु आदत पुरानी थी, एकाएक नहीं बदली जा सकती थी। बीच-बीच में हिंसा के भाव भी अपना प्रभाव दिखा रहे थे। अंगुलिमाल बोला- मैं लोगों को मारता हूं और उनकी अंगुली की माला बनाकर पहनता हूं। तुम यहां क्यों मरने चले आए?

बुद्ध बोले-अंगुलिमाल ! जिसको तू मारना चाहता है, मैं वह नहीं हूं और जो मैं हूं उसे कोई मार नहीं सकता। बुद्ध की ज्ञान गंगा से अंगुलिमाल के पाप धुल रहे थे। बुद्ध ने कहा-इस पेड़ की एक टहनी काटकर ले आओ। अंगुलिमाल ने अपनी तलवार से टहनी काट दी। बुद्ध ने फिर कहा-अब इस टहनी को दोबारा पेड़ पर लगा दो, अंगुलिमाल ने कहा-ये कैसे सम्भव है? बुद्ध बोले-जब तुम किसी को जोड़ नहीं सकते तो उसे काटने का अधिकार तुम्हें किसने दिया? काटना बहुत आसान है मगर इतिहास उन्हें याद रखता है जो कुछ जोड़ सकें। आचार्य बुद्ध की ज्ञान गंगा में स्नान कर अंगुलिमाल पुण्यात्मा बन गया। बुद्ध के चरणों में गिरकर अपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए तैयार हो गया। इस प्रकार एक कुख्यात डाकू महात्मा बुद्ध का आलौकिक सान्निध्य पाकर भिक्षुक बन गया।

तीसरा उदाहरण अमीचन्द आचार्य दयानन्द की ज्ञान-गंगा में नहाए।

अमीचन्द स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रवचनों को सुनता था। उसके अन्दर सारे अवगुण भरे पड़े थे मगर उसके बावजूद उसमें एक गुण भी था कि वह भजन बहुत अच्छा गाता था। स्वामी जी भजन के बाद उसकी पीठ थपथपाते और शाबाशी देते थे। लोगों ने स्वामी जी को कहा कि यह तो बहुत बुरा आदमी है, शराब पीता है। इसके अन्दर और भी कई सारे अवगुण है। स्वामी जी चुपचाप लोगों की बातें सुनते रहे। अपने अंतिम प्रवचन के बाद स्वामी जी ने अमीचन्द को अपने समक्ष बिठाया और बोले अमीचन्द तू हीरा है, लेकिन कीचड़ में पड़ा है। इस दलदल से बाहर आ जा, तुझमें अद्भुत चमक है।'

कहते हैं- 'एकः शब्दः सम्यक्ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुक् भवति।' आचार्य दयानन्द के उस एक शब्द ने ऐसा चमत्कार किया कि अमीचन्द की काया ही पलट गई। इसी प्रकार मुंशीराम जो सभी दुर्गुणों की खान बन चुका था। बरेली में स्वामी दयानन्द के कर्मफल विषय पर हो रहे प्रवचनरूपी ज्ञान गंगा में स्नान कर ऐसी पवित्रात्मा बने कि स्वतंत्रता आंदोलन के मध्य चांदनी चौक पर अंग्रेज सैनिकों के सामने शेर की भांति सीना तानकर खड़े हो गये और बोले-चलाओ गोली ! सन्यासी का सीना तना है। जैसे शेर की दहाड़ सुनकर वन्य प्राणियों में खलबली मच जाती है वैसे ही अंग्रेजी सैनिक भाग खड़े हुए। स्वामी दयानन्द जी की ज्ञान-गंगा में डुबकी लगाकर मुंशीराम, अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द बन गये। यह स्वामी दयानन्द का ही प्रभाव था कि श्रद्धानन्द जी ने चार ऐसे गुरुकुलों की स्थापना की जो हजारों छात्रों (ब्रह्मचारियों) को शिखर तक पहुंचाने का अद्भुत कार्य कर रहे हैं। इनमें गुरुकुल कांगड़ी और गुरुकुल कुरुक्षेत्र हरियाणा अति विख्यात है।

आचार्य के मस्तिष्क से प्रभावित हुई उपदेशरूपी ज्ञान-गंगा में डुबकी लगाकर सभी पापों को दूर कर पवित्रात्मा हुए कुछ ही लोगों के उदाहरण यहां दिये गये है। इसके अलावा ऐसे अनगिनत उदाहरणों से इतिहास भरा पड़ा है। यही है शिव के ब्रह्मरन्ध्र (ब्रह्मचक्र) से निकलने वाली वास्तविक गंगा। ये गंगा जो हिमालय से निकलती है उसमें तो केवल गंगाजल है जो केवल शारीरिक मलिनता को दूर करता है। हां, ये अवश्य है कि गंगा का जल हिमालय से औषधियों के मध्य से गुजरता हुआ आता है और सम्पर्क में आने वाली औषधियों का अर्क साथ लिये बहता है जिससे अनेक प्रकार के शारीरिक चर्मरोगों में लाभ होता है किन्तु आप जो एक अंधविश्वास और अन्धश्रद्धा की मानसिकता लिए ये समझ रहे है हैं कि वर्ष भर पाप-कर्म करें और उसके बाद एक बार हरिद्वार में जाकर गंगा स्नान कर लें तो सभी पाप कट जाएंगे, इस भ्रम में सम्पूर्ण जीवन वह पाप-कर्म ही करता है जिससे जीवन में दुःखों के अलावा कुछ प्राप्त नहीं होता।

शिव के सिर पर जटाएं–

जटाओं से तात्पर्य समाज अथवा राष्ट्र में व्याप्त जटिल समस्याओं से है। जब-जब समाज अथवा राष्ट्र पर कोई जटिल समस्या आन पड़ी तो उसका समाधान किसी आचार्य ने ही निकाला है और अपने तार्किक एवं बौद्धिक चातुर्य से उस समस्या को सुलझाकर देश पर बड़ा उपकार किया है। महाभारत युद्ध के पश्चात् देश की दुर्दशा के मूलभूत कारण सतत् वैदेशिक आक्रमण, संस्कृति तथा संस्कारों और वैदिक ज्ञान का लोप, राष्ट्र के भविष्य को अपने गर्भ में धारण करने वाली सन्तान की प्रथम गुरु माँ अर्थात् नारी शिक्षा का अभाव, धार्मिक अनुष्ठान यज्ञों में अश्व, अजा आदि पशुओं की क्रूरतापूर्ण बलिप्रथा, छुआछूत का ताण्डव, मठ-मंदिरों में अंधविश्वास, पाखण्ड का फैलता जाल जिसमें फंसकर भोली-भाली जनता को मंदिर में बैठे मठाधीश मगरमच्छों की भांति निगलते थे, पुराणों में वर्णित भक्ति (ईवरोपासना) का विकराल रूप, जहां धर्म के ठेकेदार ग्रहों-नक्षत्रों के जाल में उलझाकर मनमानी और ठगी करते थे। इस प्रकार की जटिल समस्याओं का समाधान आचार्य महर्षि दयानन्द ने तर्कयुक्त वेद-दर्शनों के प्रबल प्रमाणों से सुलझाकर समाज तथा राष्ट्र को वेदमार्ग की ओर अग्रसर करने का महान् कार्य किया। इसी प्रकार आचार्य चाणक्य, आदि शंकराचार्य जैसे अनेक आचार्यों ने समय-समय पर ऐसी जटिल समस्याओं को सुलझाया है।

जटाओं के मध्य उलझा दूज का चाँद संस्कृत साहित्य में ब्रह्मचारी को सोम कहा गया है, इसके पीछे भी प्राचीन ऋषियों का बहुत गहरा चिन्तन है क्योंकि सोम का अर्थ चन्द्रमा होता है। सोम का दूसरा अर्थ जल भी है। शतपथ ब्राह्मण में महर्षि याज्ञवल्क्य इसका प्रमाण देते हैं- द्वयंवाऽइदं न तृतीयमस्ति आर्द्र चैव शुष्कं च यच्छुष्कं तदाग्नेयं यदार्द्र तत्सोम्यम्' अर्थात् इस भौतिक जगत् के दो ही आधारभूत तत्त्व हैं-गीला और सूखा, कोई तीसरा नहीं। जो गीला भाग है वह सोम (जल तत्त्व) और जो सूखा भाग है वह अग्नि तत्त्व।

यहां चन्द्रमा को सोम (गीला) अथवा शीतल क्यों कहा गया? क्योंकि सूर्य का उष्णतायुक्त प्रकाश प्राप्त करके भी चन्द्रमा शीतल रहता है। इसके अतिरिक्त यज्ञ के मध्य दो आहूतियां अग्नि और सोम को दी जाती है। यहां यज्ञ का पुरोहित संकेत करता है-'अग्नये स्वाहा इस मंत्र से अपने उत्तर भाग की ओर आहूति तथा सोमाय स्वाहा' मंत्र से अपने दक्षिण भाग की ओर आहूति प्रदान करें। स्पष्ट है कि अग्नि तथा सोम

क्रमशः.....पृष्ठ-५ पर

पृष्ठ.....४ का शेष....

के रूपक यजमान पुरुष उत्तर भाग में तथा यजमान की पत्नी दक्षिण भाग में आसीन है, यहां पिता अग्नि और माता सोम रूप है। इन दोनों के लिए दो आहूति यहाँ राष्ट्र की विशेष सम्पत्ति बालक के निर्माण के सम्बंध में हैं। बालक को उत्तम चरित्रवान् तथा संस्कारवान् बनाने में पिता को अग्नि तथा माता को सोम रूप होना परम आवश्यक है। चावल को पकाते समय पात्र में पानी न डाला जाए तो चावल जलकर राख हो जाएंगें, जलयुक्त चावल को अग्नि का ताप न दिया जाए तो भात नहीं बन सकता, अतः यहां अग्नि तत्त्व तथा जल तत्त्व का होना अति अनिवार्य है।

याज्ञवल्क्य– आगे कंडिका में लिखते हैं 'अग्निः सोमयोः पुरोडाशः शत.ब्रा. अ.-षष्ठ, ब्रा. तृतीय अर्थात् अग्नि तथा सोम दोनों से पुरोडाश उत्तम सामग्री तैयार होती है अर्थात् अग्निरूप पिता तथा सोम रूप माता के सानिध्य से उत्तम संस्कारयुक्त सन्तान का निर्माण होता हैं इस प्रकार वह उत्तम बुद्धि का बालक लौकिक तथा पारलौकिक कर्तृतव्य एवं अकर्तृतव्य कर्मों की उलझन में उलझा हुआ सांसारिक अनेक प्रश्नों में बंधा पड़ा है। वह चन्द्रमारूपी सोम ब्रह्मचारी अपनी उलझनों और ग्रन्थियों के समाधान हेतु आचार्यरूपी शिव के मस्तिष्क पर बहती हुई ज्ञान गंगा का उपनयन होता है तब अपने सभी प्रश्नों का समाधान पाकर वह छोटा सा वर्णी चन्द्रमा की भांति सूर्यरूपी आचार्य के ज्ञानरूपी प्रकाश से एक-एक कला का विकास करता हुआ पूर्ण चन्द्रमा अर्थात् षोडश कला पूर्ण हो जाता है तब वह चन्द्रमा रूपी ब्रह्मचारी आचार्य के ज्ञानरूपी प्रकाश से प्रकाशित होकर अपने समस्त संशयों का उन्मूल कर लेता है, यही शिव के सिर पर स्थित चन्द्रमा प्रतीक के रूप में है।

शिव के तीन नेत्र–

तीन आंखें केवल शिव के पास है ऐसा नहीं है, अपितु यह कहना अधिक उचित होगा कि शिव जो आचार्यत्व को प्राप्त कर चुका है, उसका तृतीय नेत्र खुल जाता है। प्रत्येक मनुष्य के पास तीन आंखें होती है। वह दो आंखों से प्रकृति के दर्शन करता है, क्योंकि प्राकृतिक आंखें प्राकृतिक दर्शन ही करा सकती है, आध्यात्म को देखना इनके वश में नहीं। वहां तो तीसरी आंख होती है जो आत्मदर्शन कराती है और वह है ज्ञान-चक्षु।

कठोपनिषद् की चतुर्थी वल्ली में कहा गया है–

परांचिखानि
व्यतृणत्स्वयंभुस्तस्मात्परान्पश्यति
नान्तरात्मन्।
कश्चिद् धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्त
चक्षुरमृतत्वमिच्छन्।।
(कठोपनिषद्, चतुर्थी वल्ली, १)

परमेश्वर ने इन चक्षु आदि बाह्य इंद्रियों को बाह्य प्रकृति हेतु ही बनाया है। अतः ये इन्द्रियां बाहर के पदार्थों को ही देखती हैं अन्तर आत्मतत्त्व को नहीं। किन्तु कोई विलक्षण धैर्यवान् आचार्य अपने ज्ञान तथा विवेक की आंख से अन्तरात्मा का दर्शन करता है। अतः आचार्य तत्त्ववेत्ता की तीसरी आंख ज्ञान चक्षु खुल जाता है और वह आत्मसाक्षात्कार करता है। शिव का चित्र ध्यान से देखिए, वहां दोनों बाह्य नेत्र बंद होते हैं किन्तु ज्ञानकेन्द्र अर्थात् दोनों भृकुटियों के बीच में जो चक्षु है वह खुला हुआ होता है क्योंकि अन्तर्चक्षु तथा बाह्यचक्षु दोनों एक साथ नहीं खुलते। समाधि अवस्था में भौतिक नेत्र बन्द होते हैं किन्तु ज्ञानचक्षु खुला होता है। योगिराज श्रीकृष्ण ने इस विषय पर गीता के माध्यम से प्रकाश डाला है-

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतोमुनेः।
गीता अ.२, श्लोक ६९

अर्थात् समस्त भौतिक मनुष्य जिस प्रकृतिवाद अर्थात् प्राकृतिक नश्वर पदार्थों के प्रति जागरूक है अर्थात् प्राकृतिक भोग विकास संसाधनों तथा सुख-सुविधाओं की ओर दौड रहा है, उन भौतिक पदार्थों के प्रति योगी संयमी सोया पड़ा है। उसकी इनके प्रति कोई रूचि नहीं है किन्तु जिस आध्यात्म के प्रति संयमी जागरूक है उस क्षेत्र में सामान्य प्राणी सोया पड़ा है अर्थात् आत्मतत्त्व की ओर से आंखे बंद किये हुए है। अतः आचार्य जिनका तीसरा ज्ञानचक्षु खुल गया है, उनके लिए यह भौतिक संसार गौण है। कहा जाता है जब शिव का तीसरा नेत्र खुलता है तो कामदेव भस्म हो गया। बिल्कुल ठीक कहा गया है, तीनों प्रकार की ऐषणाएं लोकैषणा, पुत्रैषणा तथा वित्तैषणा, ये तीनों ऐषणाएं योगी के लिए बहुत बड़ी बाधा है। अज्ञान के द्वारा ये पुष्ट बलवती होती है अतः ज्ञान विवेक का उदय होते ही ये सभी कामनाएं नष्ट हो जाती है और वह निष्काम कर्म कर्ता कहलाता है।

यहां भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गीता के माध्यम से दिया उपदेश प्रासंगिक होगा–

ध्यायतो विषयान्पुंसः सस्तेषूपजायते
सङ्गात्संजायते कामः
कामात्क्रोधोऽभिजायते ।
क्रोधाद्भवति संम्मोहः सम्मोहात्स्मृति
विभ्रमः, स्मृति भ्रंशात्बुद्धि नाशो
बुद्धिनाशात्प्रणस्यति।।
(गीता, अध्याय-२, श्लोक-६२/६३)

अतः जैसे ही आचार्य, योगी का ज्ञानचक्षु खुलता है वैसे ही भौतिक विषयों का आकर्षण नष्ट हो जाता है, यही है शिव का तृतीय नेत्र।

शिव के कण्ठ में सर्पों का आभूषण–

सांसारिक लोगों के आभूषण सोने-चांदी आदि बहुमूल्य रत्नों से घड़ित होते हैं जो मात्र शारीरिक शोभा को बढ़ाते हैं और इसी के साथ नष्ट हो जाते हैं किन्तु आचार्यों के आभूषण इन नश्वर धातुओं से घड़ित नहीं होते जो नष्ट हो जाएं। जिनसे ये सुशोभित होते हैं, वे आभूषण तो कुछ विशेष होते हैं। आचार्य को अलंकृत करने वाले आभूषण को जानने से पहले इस तथ्य को जाने-'किसी व्यक्ति को कहा गया कि अमुक गांव में २०० आदमी पापी हैं, उन्हें जाकर मार दो। उस अज्ञानी मतिहीन ने हाथ में तलवार उठाई और २०० व्यक्तियों को मारकर आ गया। वही बात एक वेदादि सत्य शास्त्रों के यथावत ज्ञाता विवेकपूर्ण आचार्य से कही। उन्होंने तलवार या कोई शस्त्र नहीं उठाया अपितु शास्त्र उठाया और अपने दिव्य वचनामृत से इस तरह से सभी का हृदय परिवर्तन कर दिया वे सभी पापी से पुण्यात्मा बन गये। इस पर उन्होंने पापी नहीं बल्कि पाप का अन्त किया। जब उनका नाम आता है तो साथ ही उनको सुपथ पर लाने वाले उनके द्वारा शोभा को प्राप्त आचार्यों का नाम भी बड़े सम्मान से लिया जाता है। जैसे अंगुलिमाल डाकू बुद्ध का अलंकार, अमीचन्द तथा मुंशीराम महर्षि दयानन्द के अलंकार बनें।अब मूल विषय पर आते हैं। उपरोक्त तथ्य से यह स्पष्ट हो गया है कि आचार्यों के सम्पर्क में पापी भी पवित्र हो जाता है, दुर्जन को यहां सर्प का रूप दिया गया है। संस्कृत में सांप के लिए अनेक पर्यायवाची शब्द हैं, वहां एक शब्द 'अहि' भी है। 'अहितं करोति इति अहिः' यह शब्द दुर्जन व्यक्ति के लिए भी आता है। जो आचार्य समाज का देश का अहित करने वाले सर्परूपी दुर्जनों को अपने सदुपदेशों से बदलकर उनको एक सज्जन तथा राष्ट्र एवं समाज का हितकारी बना दे तो वे आचार्य की शोभा को बढ़ाने वाले बन जाते हैं। वेद में आता है-देश की सीमा की शत्रुओं से सुरक्षा क्षत्रिय करता है, अतः क्षत्रिय के हाथ में शस्त्र होता है।

वही आंतरिक काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, स्वार्थ आदि शत्रुओं से मानव मात्र की सुरक्षा ब्राह्मण, आचार्य, पुरोहित करता है। अतः ज्ञान का प्रतीक उसके हाथ में शास्त्र होता है। स्पष्ट हैं कि शस्त्र और शास्त्र हमारे भौतिक तथा आत्मिक शत्रुओं से रक्षा करते हैं।

बुरों की भलाई करना सबसे अच्छा काम है।
छुड़ा दे बुराई उसकी जिससे वो बदनाम है।।

इसी कार्य हेतु शिव के गले में सर्प प्रतीक रूप में विद्यमान है।

शिव के वस्त्र मृग चर्म–

आचार्य का आवरण मृग चर्म ही होना चाहिए और वह भी काले मृग की (कृष्णाजिन) किन्तु वह कृष्णाजिन क्या है? उसे समझना आवश्यक है और उसे समझने के लिए हम सीधे स्वतः प्रमाण वेद की शरण लेते हैं:-

ब्रह्मचायेकृति समिधा समिद्धः
कृष्णवसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः।
(अथर्ववेद अ०-११, सू-५, मंत्र-६)

पिछले लेख में शतपथ ब्राह्मण की एक कंडिका का उद्धरण देकर कृष्णाजिन का अर्थ स्पष्ट किया गया था कि चारों वेदों का यथावत ज्ञान ही कृष्णाजिन है। 'अथकृष्णाजिनमादत्ते (शत. ब्रा. प्र. अ. चतुर्थ ब्रा.) अतः शिव के वस्त्र (आवरण) वेदत्रयी ज्ञान से सम्बन्ध रखता है अर्थात् आचार्य वेदों के ज्ञान से आवृत्त होना चाहिए। अतः शिव के वस्त्र मृगचर्म (कृष्णाजिन) है।

शिव का नीला कण्ठ–

ऐसा कहा जाता है कि सागर मंथन के समय जब हलाहल विषय निकला तो उसे शिव ने ही पीया था किन्तु उसे अपने कण्ठ में ही रखा जिससे उनका कण्ठ नीला पड़ गया। तनिक विचार करें कि जो विष कण्ठ में है तो वह जब तक बाहर या भीतर न जाए क्या वह बोल सकता है। आप एक घूंट पानी अपने कण्ठ में रखकर प्रयोग करें कि जब तक वह कण्ठस्थ पानी बाहर या भीतर पेट में न चला जाए तब तक न तो कुछ खा सकते और न कुछ पी सकते। न कुछ बोल पाएंगे तो शिव के गले में विष है इसका अर्थ कुछ और ही है। विष व्यक्ति को मारता है और शास्त्रों में जीवित वही है जिसकी संसार में कीर्ति है-'कीर्तियस्य स जीवति' शुभ कर्म कीर्ति तथा दुष्कर्म अपकीर्ति का मूल है। भाव यह है कि समाज तथा राष्ट्र में व्याप्त बुराइयां, पाखण्ड, अंधविश्वास, अज्ञान, अविद्या ही विष है जिसको आचार्य स्वयं पी जाता है अर्थात् नष्ट करता है और अमृत अर्थात् विद्या, ज्ञान का प्रकाश करता है। यहां प्रतीक के रूप में नीलकण्ठ का तात्पर्य यही है कि शिव अर्थात् आचार्य समाज में व्याप्त विषरूपी बुराइयों को पीता है किन्तु अपने हृदय में नहीं आने देता, जैसे उपनिषद् में आता है-सूर्य अंधकार को खा जाता है, इसका अर्थ भली-भांति सभी जानते हैं कि अंधेरे को सूर्य नष्ट कर देता है, ऐसा ही अर्थ यहां भी है।

शिव का शस्त्र त्रिशूल–

अस्त्रों तथा शस्त्रों का प्रयोग शत्रुदल के लिए किया जाता है तो शिव का शस्त्र त्रिशूल ही क्यों? क्योंकि आचार्य के शत्रु बाह्य तो हो नहीं सकते किन्तु आन्तरिक आलस्य, प्रमाद आदि अवश्य होते हैं जो कभी भी अन्दर घुसकर उत्पात मचा सकते हैं और ये शत्रु वेदत्रयी आचार्य के ज्ञान पर आक्रमण करते हैं अतः आचार्य को सजग तथा सावधान रहना चाहिए। ज्ञान, कर्म, उपासना ये तीन प्रकार का ज्ञान ही वेदत्रयी कहलाता है। इन तीनों का प्रतीक 'त्रिशूल' है। इन तीनों त्रि-शूलों से ही शिव अन्तस्थ शत्रु को बेधता है। कहा भी गया है-

आलस्योहि मनुष्याण शरीरस्थो महान् रिपुः,
न उद्यम समो बन्धु कृत्वा यं नावसीदति ।।

अन्तस्थ सबसे बड़ा शत्रु आलस्य है, अतः परिश्रम करके इस आलस्य को मार गिराना चाहिए। अतः आचार्य को सदा सजग रहना चाहिए।

शिव के हाथ में डमरू–

हमने देखा है कि पहले मदारी गांव तथा नगरों में बन्दर और भालू का खेल दिखाने के लिए आया करते थे। बन्दरों को अपने इशारे पर नचाने के लिए वे डमरू हाथ में लेकर उसे बजाते हुए नचाते थे। जब चंचलता का प्रसंग आता है तो बन्दर को याद किया जाता है अर्थात् चंचलता की उपमा बंदर से दी जाती है। शरीर के भीतर भी एक बहुत चंचल बंदर बैठा है जिसको मन कहते हैं। अर्जुन ने इस मन को वायु के समान वश में करना कठिन माना है-

चंचलं हि मनः कृष्णः प्रमार्थि
बलवदृढम्।
तस्याऽहं निग्रहं मन्ये वायोरिव
सुदुष्करम्।।
(गीता अ. ६, श्लोक ३४)

इसका उत्तर देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं- अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते। अर्थात् सतत् अभ्यास और प्रबल वैराग्य से यह मन वश में हो जाता है किन्तु इस प्रसंग में शिव के हाथ में डमरू का अर्थ यह है कि जैसे मदारी डमरू बजाकर बंदर को अपने वश में करता है, आचार्य भी ज्ञान तथा वैराग्य से मन को वशीभूत करता है। तात्पर्य यह है कि डमरू चंचल मन को वश में करने का प्रतीक है।

शिव की सवारी बैल–

सवारी अर्थात् आगे चलने वाला आधार, जीवन का आधार। संस्कृत में वृषः बैल को भी कहते हैं और सूर्य को भी किन्तु यहां ज्ञान के सूर्य से तात्पर्य है। इसकी पुष्टि के लिए दो उदाहरण आपके समक्ष रखता हूं। अर्थों की स्थापना प्रासंगिक हो तो विशुद्ध वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति होगी किन्तु यदि अर्थ प्रासंगिक तथा अनुवृत्ति के प्रतिकूल होंगे तो अर्थ तो शब्दों का होगा किन्तु विपरीत अज्ञान के गड्ढे में डूबते जाएंगे।

सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने प्रासंगिक अनुवृत्ति का उदाहरण दिया है जैसे किसी ने किसी से कहा कि हे भृत्य ! त्वं सैन्धवमानय' अर्थात् तू सैन्धव को ले आ। तब उसको समय अर्थात् प्रकरण का विचार करना आवश्यक है क्योंकि सैन्धवं नाम दो पदार्थों का है। एक घोड़ा, दूसरा लवण। जो स्व स्वामी का गमन समय हो तो घोड़े और भोजन का काल हो तो लवण को ले आना उचित है।

उसी प्रकार पौराणिकों ने अनेक स्थानों पर भारी अनर्थ किया है जैसे यह धरती बैल के सींग पर टिकी है, जब बैल सींग हिलाता है तो भूकम्प आता है आदि-आदि। ये कैसी निराधार बात है। वहां भी बैल अर्थ देने वाला शब्द सूर्य है। प्रसंगानुकूल अर्थ निकालना चाहिए। यहां इस प्रसंग में भी सवारी / आधार सूर्य अर्थात् ज्ञान से है। चारों वेदों तथा सभी आर्ष ग्रन्थों, व्याकरण आदि सांगोपांग, ज्ञान ही आचार्य का आधार है। उसी ज्ञान का सहारा लेकर वह जीवन में गतिमान होता है। वहां शिव की सवारी बैल नहीं अपितु आचार्य की आधारभूत सवारी ज्ञान है।

शिव की पत्नी पार्वती–

यह उलझन भरी एक रोचक पहेली है। पार्वती शब्द की व्युत्पत्ति 'पर्वतस्य अपत्यं पार्वती' अथवा पर्वतात् जातं पार्वतम् स्त्री भाव में डीप् प्रत्यय होकर पार्वती शब्द सिद्ध होता है। अर्थात् पर्वतः से उत्पन्न होने वाली। लोग प्रायः यह कहते हैं कि पार्वती हिमालय पर्वत की पुत्री थी, ये ठीक भी है। हिमालय से उत्पन्न होने वाली पार्वती, वह शिव की पत्नी है। अब पत्नी शब्द पर थोड़ा विचार करें। पत्नी शब्द का अर्थ है अधोपतन से रक्षा करने वाली पत्नात् उन्नयति इति पत्नी' अर्थात् अपने स्वामी को अधर्म के कार्यों से ऊपर उठाने, उसकी रक्षा करने तथा उसे उन्नति के शिखर पर पहुंचाने का दायित्व निभाने वाली, पत्नी कहलाती है। इस संदर्भ में आचार्य जो शिव का रूप है, उसकी पत्नी बुद्धि है। जो आचार्य की अधोपतन, पापकर्मों से सदा रक्षा करती है। अब प्रश्न उठता है कि पर्वत से उत्पन्न होने का क्या अभिप्राय है? इस प्रश्न का उत्तर वेद से लेते हैं। वेद में एक मंत्र आता है-

उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्
धिया विप्रोऽजायत।
(यजु. अ. २६, मंत्र १५)

अर्थात् पर्वतों की कन्दराओं तथा नदियों के संगम, समीप एकान्त स्थान में ध्यानावस्थित होकर ब्रह्मतत्त्व वेत्ता ब्राह्मण उत्कृष्ट प्रज्ञा बुद्धि को प्राप्त करता है जो आचार्य की सदा उन्नति की करती है उसे पतन से बचा लेती है इसलिए यह बुद्धि पार्वती अर्थात् पर्वत से उत्पन्न होने वाली कहलाती है।

आशा करता हूँ कि शिव के सांकेतिक चिह्नों को पाठकवृन्द समझ गये होंगे। हम इन सांकेतिक चिदों को संकेत मात्र समये तो समाज का बहत भला होगा।

सँस्कृत विभागाध्यक्ष,
गुरूकुल कुरूक्षेत्र

पृष्ठ.....१ का शेष....

पाठ तुम्हें नहीं पढ़ाया जाएगा। इस बार भी यदि यह प्रयोग-सिद्धि स्मरण न हुई तो यमुना के जल में डूब मरना, पर मेरी कुटिया पर कदम न रखना।''

दयानन्द ने आगे कुछ नहीं कहा। गुरु के चरणों का विनम्र भाव से स्पर्श किया और यमुना की ओर चल दिए। निश्चय कर लिया कि यदि प्रयोग सिद्धि स्मरण न हुई तो यमुना के जल में समाधि ले लेंगे। वे सीताघाट के शिखर पर पहुँच गए। समाधि लगाई और ध्यान अष्टाध्यायी की विस्मृत प्रयोग-सिद्धि पर लगा दिया। उन्होंने मन को इतना एकाग्र किया कि तन की सुधि ही बिसर गई। उन्हें ऐसा लगा कि कोई व्यक्ति उनके सम्मुख है और उन्हें विस्तृत प्रयोगसिद्धि सुना रहा है। प्रयोगसिद्धि समाप्त हुई तो दयानन्द जी की चेतना लौट आई। वे प्रसन्न थे। उन्होंने प्रयोगसिद्धि दोहराई तो सम्पूर्ण स्मरण थी। दौड़ते हुए गुरु-चरणों में उपस्थित हुए और एक साँस में सम्पूर्ण प्रयोगसिद्धि सुना दी और समाधिस्थ अवस्था में अपने साथ घटी घटना भी। प्रयोग-सिद्धि सुन कर गुरु भावविभोर हो गए और उन्होंने अपने प्रिय शिष्य को गले से लगा लिया। हर्षाश्रुओं से उनकी आँखें भीग गई थीं।

उषा ने धीरे-धीरे अपनी लालिमा धरती पर बिखेरनी आरम्भ की। सूर्योदय में अभी विलम्ब था। एक श्रद्धालु महिला यमुना-जल में स्नान कर घर को लौट रही थी। सामने यमुना तट की रेत पर साधना में लीन भव्य संत-आकृति को देख उसका मन श्रद्धाभाव से भर उठा। उसे उस संत के श्री चरणों में शीश झुका आशीर्वाद प्राप्त कर लेने की इच्छा हुई। वह धीरे-धीरे समाधिस्थ संत की ओर बढ़ी और विनम्रतापूर्वक अपना मस्तक उनके चरणों पर टिका दिया। दयानन्द माता माता कहते हुए उठ खड़े हुए। संन्यास की मर्यादा का पालन करते हुए वे स्त्री-स्पर्श से सदा बचते रहे थे। इस चरण स्पर्श से वे एकदम चौंके और स्त्री-स्पर्श को प्रायश्चित्त करने के लिए एक निर्जन स्थान की तलाश में गोवर्धन पर्वत पर पहुँच एक खण्डहर हुए मन्दिर में बैठ समाधिस्थ हो गये। तीन दिन उन्होंने साधना में व्यतीत किए। चौथे दिन जब विद्यार्जन के लिए गुरुचरणों में पधारे तो गुरु द्वारा निरन्तर अनुपस्थित रहने का कारण पूछने पर दयानन्द ने व्रतभंग तथा प्रायश्चित्त की पूरी घटना दण्डी स्वामी विरजानन्द के सम्मुख प्रस्तुत कर दी। शिष्य के तपःपूत चरित्र से गुरु प्रसन्न हुए और शिष्य को आशीर्वाद देते हुए उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

वृद्ध एवं नेत्रहीन होने के कारण दण्डी विरजानन्द जी के स्वभाव में सहज कठोरता आ गई थी। परिणामस्वरूप वे शिष्यों के प्रति यदा-कदा सामान्य कारणवश भी क्रुद्ध व अप्रसन्न हो जाते थे। एक दिन दण्डी जी शिष्य दयानन्द पर क्रोधाभिभूत हो दण्ड-प्रहार कर बैठे। इस पर भी गुरुभक्त शिष्य ने विनम्रभाव से कहा-महाराज, आप मुझे इस प्रकार न मारा करें। तप से वज्र के समान बने मेरे कठोर शरीर पर प्रहार करने से आपके कोमल हाथों को ही पीड़ा होगी। यह प्रसिद्ध है कि कालान्तर में दयानन्द अपने शरीर पर पड़े चोट के चिह्न को देखकर गुरु के उपकारों का स्मरण किया करते।

एक अन्य अवसर पर जब दण्डी जी ने अप्रसन्न होकर शिष्य दयानन्द को दण्डित किया तो नैनसुख जड़िया नामक भक्त ने प्रज्ञाचक्षु गुरु से निवेदन किया-महाराज, दयानन्द हमारे समान गृहस्थी नहीं है, वह संन्यासी है। उनके आश्रम की मर्यादा का विचार करते हुए आप उनके प्रति इस प्रकार की कठोरता न किया करें। गुरु विरजानन्द ने इस परामर्श को स्वीकार करते हुए कहा-हम भविष्य में प्रतिष्ठा के साथ पढ़ायेंगे, परन्तु गुरु के प्रति भक्तिभाव से आप्लावित श्रद्धालु दयानन्द ने नैनसुख से कहा-आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था। गुरु जी तो उपकार की भावना से ही दण्डित करते हैं, द्वेषभाव से नहीं। यह तो उनकी कृपा ही है।

विद्या-समाप्ति में १५-२० दिन ही शेष रहे थे कि एक दिन गुरु की आज्ञा से उनके स्थान पर झाड़ लगाकर कूड़ा अभी उठा नहीं पाये थे कि टहलते हुए दण्डी जी का पैर कूड़े से जा टकराया। इससे क्रुद्ध हुए दण्डी जी ने दयानन्द को फटकारते हुए उनकी ड्योढी बन्द कर दी अर्थात् उन्हें पाठशाला से बाहर जाने का आदेश दे डाला। इससे शिष्य दयानन्द को बहुत दुःख हुआ। कहते हैं नैनसुख जड़िया व नन्दन चौबे की संस्तुति से ही दयानन्द को क्षमा तथा पुनः पाठशाला में प्रवेश का अधिकार प्राप्त हुआ।

इस प्रकार दयानन्द की ड्योढी बन्द होने का अवसर एक बार और भी आया। एक बार दण्डी जी का कोई दूर का सम्बन्धी मथुरा आया और वीतराग संन्यासी के दर्शन की कामना से पाठशाला में उपस्थित हुआ। उन दिनों दण्डी जी का कठोर आदेश था कि विद्यार्थियों के अतिरिक्त अन्य कोई हमारे समीप ने आवे। आगन्तुक ने स्वामी दयानन्द से दण्डी जी के दर्शन कराने की प्रार्थना की। दयानन्द द्वारा गुरु जी का आदेश बतला देने पर भी वह अनुनय-विनय करता रहा। इस पर सरलचित्त दयानन्द उन्हें अपने साथ ले गये तथा दण्डी जी के दर्शन करा दिये। जब वे वापिस लौट रहे थे तो एक सहाध्यायी ने गुरु जी से इसकी शिकायत कर दी। इससे दण्डी जी ने दयानन्द पर अप्रसन्न हो पुनः उनका पाठशाला में प्रवेश निषिद्ध कर दिया। दयानन्द ने बहुत अभ्यर्थना की, परन्तु गुरुवर शान्त न हुए। अन्त में नैनसुख जड़िया की सिफारिश पर ही गुरु-कुटिया का द्वार खुला।

ये हैं गुरु-चरणों में अध्ययन करते हुए शिष्य दयानन्द के संस्मरण, जिनसे उनकी गुरु के प्रति अटूट आस्था, श्रद्धा, विनम्रता व अतिशय भक्तिभाव व्यक्त होता है।

स्वामी दयानन्द की ग्रहण-शक्ति और तर्क-बुद्धि पर गुरु जी मोहित थे। गुरु जी का उन पर अपार स्नेह भी था। पाठ पढ़ाते समय अनेक बार अपने शिष्यों में उनकी प्रशंसा करते थे। वे कहते थे-दयानन्द-सा दूसरा शिष्य नहीं है। मेरे सपनों को यही साकार रूप दे सकेगा। मेरे विचारों को प्रख्यात करने की क्षमता दयानन्द में है। गुरु विरजानन्द इस शिष्य की प्रबुद्धता देख प्रसन्न हो उठते और कहते--दयानन्द, इस कुटिया में कितने ही शिक्षार्थी आए और चले गए, पर जो आनन्द तुझे पढ़ाने में आता है ऐसा आनन्द कभी नहीं आया। तुम्हारी तर्क-शक्ति सराहनीय है। कुमतों का खण्डन तुम्हारे द्वारा सम्भव है।

विद्याध्ययन का समय समाप्त हो गया। अढ़ाई वर्ष तक गुरु चरणों में बैठ स्वामी दयानन्द ने निष्ठापूर्वक ऋषिकृत ग्रन्थों का अध्ययन किया। अब कोई जिज्ञासा शेष नहीं थी। गुरु जी से विदाई का क्षण आ उपस्थित हुआ। यद्यपि दण्डी स्वामी अपने शिष्यों से कभी कोई भेंट नहीं स्वीकारते थे, फिर भी दयानन्द जी ने गुरु के समीप खाली हाथ उपस्थित होना उचित नहीं समझा। उनके पास ऐसा कोई द्रव्य नहीं था, जिसे वे गुरुचरणों में समर्पित कर देते, फिर भी प्रयास पूर्वक उन्होंने कुछ लौंग कहीं से प्राप्त कर और गुरु-कुटिया पर उपस्थित हो, उनके चरणों में सिर धर दयानन्द ने गुरु जी से निवेदन किया-गुरुवर, मेरा अध्ययन-काल समाप्त हुआ। अब मैं देश भ्रमण के लिए आपकी आज्ञा चाहता हूँ। आपका आशीर्वाद मुझे चाहिए। मेरे पास श्रीचरणों में समर्पित करने के लिए कोई वस्तु नहीं है। ये थोड़े-से लौंग हैं, इन्हें आप स्वीकार करें।

गुरु विरजानन्द जी ने स्वामी दयानन्द के सिर पर स्नेह का हाथ रखा और बोले-वत्स, लौंग मुझे नहीं चाहिएँ। गुरु-दक्षिणा के लिए ये पर्याप्त नहीं हैं।

आज्ञा करें गुरुदेव, मेरा तन और मन गुरु चरणों में समर्पित है। दयानन्द ने चरण छूकर विनम्र निवेदन किया।

दण्डी स्वामी ने गद्‌गद स्वर में कहा-दयानन्द तुझसे मुझे यही आशा थी। देश में अज्ञान का अन्धकार छाया हुआ है। कुरीतियों में फंसे लोग नरक-सी जिन्दगी जी रहे हैं। अन्धविश्वास की जड़ें गहरी हो गई हैं। वैदिक ग्रन्थों का पठन-पाठन, चिन्तन-मनन विलुप्त हो गया है। विभिन्न मत मतान्तरों ने अपने पैर फैला लिये हैं। दीन-हीन समाज दुर्गति की ओर लुढ़कता चला जा रहा है। समाज को अधोगति से बचाओ। लोक कल्याण के लिए स्वयं को समर्पित करो। सोते देश को जागृत करो। इसके अतिरिक्त गुरु-दक्षिणा में मुझे कुछ और नहीं चाहिए।

दयानन्द ने अपना सिर गुरु-चरणों में रख दिया और बोले-आपकी आज्ञा शिरोधार्य गुरुवर ! दयानन्द जीवनभर समाज-सेवा से विरत नहीं होगा।

दण्डी स्वामी प्रसन्न हुए। चरणों में नतमस्तक दयानन्द को भरपूर आशीर्वाद दिया-परमात्मा तुम्हें सफलता दें, परन्तु ध्यान रखना अनार्ष ग्रन्थ अध्ययन के योग्य नहीं हैं, उनमें परमात्मा और ऋषियों की निन्दा है। अतः आर्ष ग्रन्थों का पठन-पाठन ही करना।

ऐसा ही होगा गुरुदेव!'' विनम्र भाव से दयानन्द ने कहा। गुरु जी से विदा ली और आगरा की ओर चल दिए।

प्रस्तुति-'अवत्सार'
(सोशल मीडिया)

हिन्दुओं की दुर्दशा के लिए कौन जिम्मेदार है?

-डा० विवेक आर्य

असम ब्रह्मपुत्र नदी और घने जंगलों का सुन्दर प्रदेश चिरकाल से हिन्दू राजाओं द्वारा शासित प्रदेश रहा है। असाम में इस्लाम ने सबसे पहले दस्तक बख्तियार खिलजी के रूप में १३ वीं शताब्दी में दी थी। बंगाल पर चढ़ाई करने के बाद खिलजी ने असाम और तिब्बत पर आक्रमण करने का निर्णय किया। अली नामक एक परिवर्तित मुसलमान खिलजी को ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे वर्धन कोटध्बंगमती नामक स्थान पर ले गया। वहां पर ब्रह्मपुत्र नदी पर एक विशाल पुल बना हुआ था। खिलजी ने उस पुल को पार करते हुए अपने सैनिक उसकी रक्षा में लगा दिए और वह आगे बढ़ गया। अनेक शहरों को लुटते हुए, मंदिरों को मस्जिदों में परिवर्तित करते हुआ खिलजी आसाम में तबाही मचाने लगा। सन् १२०३ में असाम के बंगवन और देओकोट के मध्य खिलजी अपनी सेना के साथ डेरा डाले था। आसाम के राजा ने सुनियोजित तरीके से अपनी सेना के साथ आराम करते खिलजी पर सुबह हमला बोल दिया। तीर-भालों की हिन्दू सेना ने दोपहर तक खिलजी की सेना को तहस नहस कर डाला। आक्रमण इतनी तत्परता से किया गया था कि खिलजी अपनी बची खुची सेना के साथ भाग खड़ा हुआ। बचे हुए सैनिक जब वापिस ब्रह्मपुत्र नदी के पुल तक पहुंचे तो उन्होंने पाया कि हिन्दू राजा ने उस पुल को तोड़ दिया था। एक ओर हिन्दू राजा की सेना और दूसरी ओर ब्रह्मपुत्र की विशाल नदी। न खाने को अन्न न लड़ने को शस्त्र। भुखमरी से प्राण निकलने लगे तो अपने ही घोड़ों को खिलजी सैनिक मार कर खाने लगे। इतने में हिन्दू सेना का खेराव बढ़ता गया तो अपनी जान बचाने के लिए बैलों को मार कर खिलजी ने उन्हें पानी में डुबों कर फुलाया। उन फुले हुए बैलों पर बैठकरकिसी प्रकार से खिलजी अपने प्राण बचाकर असाम से भागा था। उसके बाद हार से बौखलाया हुए खिलजी की हत्या उसी के एक मुसलिम सिपाही ने कर दी थी। हिन्दू राजा की सुनियोजित रणनीति से असाम का इस्लामीकरण होने से बच गया। यह हार शताब्दियों तक मुसलमानों को याद रही थी।

१७ वीं शताब्दी में अजान पीर उर्फ शाह मीरा के नाम से एक सूफी संत बगदाद से चलकर शिवसागर,असाम पहुंचा। उसका नाम अजान इसलिए था क्यूंकि वह सुबह सुबह उठकर अजान दिया करता था। वह निजामुद्दीन औलिया के चिश्ती सूफी सम्प्रदाय से था। उसने एक अहोम असमी लड़की से विवाह किया और असाम में बस गया। जब उससे दाल नहीं गली तो उसने एक पुराना सूफी तरीका अपनाया। उसने दो भजन लिखे। इन भजनों में इस्लामिक शिक्षाओं के साथ साथ असाम के प्रसिद्द संत शंकरदेव की शिक्षाएं भी समाहित कर दी। यह इसलिए किया कि असम के स्थानीय हिन्दुओं को यह लगे कि अजान पीर भी शंकर देव के समान कोई संत है। अजान पीर की यह तरकीब कामयाब हो गई। उसके अनेक हिन्दू पहले शिष्य बने फिर बाद में मुसलमान बन गए। उसकी प्रतिष्ठा बढ़ते देख असाम के हिन्दू शासक को किसी ने उसकी शिकायत कर दी कि वह मुगलों का जासूस था। राजा ने अजान पीर की दोनों आंखें निकाल देने का हुकुम कर दिया। अजान पीर की दोनों आंखें निकाल दी गई। एक किवदंती उड़ा दी गई कि अजान पीर ने दो मटकों के सामने अपनी चेहरे को किया और उसकी दोनों आंखें निकल कर मटके में तैरने लगी। समझदार पाठक आसानी से समझ सकते है कि पूरी दाल ही काली है। इतने में दुर्भाग्य से राजा के साथ कोई दुर्घटना घट गई। किसी धर्मभीरु ने राजा को सलाह दे दी कि यह दुर्घटना उस पीर को सताने से हुई है। हिन्दू समाज की विफलता का सबसे बड़ा कारण यह सलाह देने वाले लोग है, जो सदा हिन्दू राजाओं को या तो अंधविश्वासी बनाने में लगे रहे अथवा अकर्मय बनाने में लगे रहे। असाम के राजा ने पीर को बुलाकर पश्चाताप किया। उसे शिवसागर के समीप भूमि दान कर राजा ने मठ बनाने की अनुमति प्रदान कर दी।

आखिर इस्लाम को अपनी जड़े जमाने का असाम में अवसर मिल गया। जो काम पिछले ५०० वर्षों में इस्लामिक तलवार नहीं कर पायी वह काम एक सूफी ने कर दिखाया। धीरे धीरे हजारों लोगों को इस्लाम में दीक्षित कर अजान पीर मर गया। उसकी कब्र एक मजार में परिवर्तित हो गई। सालाना उर्स में असाम के हिन्दू मुसलमानों के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर अपना माथा उसकी कब्र पर पटकने लगे। आज भी यह क्रम जारी है। जो काम इस्लामिक तलवार न कर सकी वो एक सूफी ने कर दिखाया।

अपने प्राचीन गौरव और संघर्ष को भूलकर मुसलमानों की कब्रों पर सर पटकने वाले हिन्दुओं तुम्हारी बुद्धि का ऐसा नाश क्यों हुआ?

धर्म क्या है? ईश्वर क्या है? ईश्वर की पूजा कैसे करनी चाहिए? कब्रों को पूजना चाहिए या नहीं। यह आसाम के हिन्दुओं को कौन बतायेगा। उनके लिए तो मंदिर में मूर्तिपूजना और कब्र पूजना एक समान है। इस आध्यात्मिक खोखलेपन और हिन्दुओं की दुर्दशा के लिए कौन जिम्मेदार है?

पाठक स्वयं निर्णय करे।

कत्लेआम पर वेद और कुरान की गवाही

(शास्त्रार्थ महारथी अमर स्वामी जी के ट्रैक्ट जिहाद के नाम पर कत्लेआम नामक ट्रैक्ट पर आधारित)

सोशल मीडिया के माध्यम से एक वीडियो मेरे देखने में आया। इसमें एक मोमिन यह दिखा रहा है कि वेदों में कत्लेआम, मारकाट, हिंसा का सन्देश दिया गया हैं। मोमिन का कहना है कि जो लोग कुरान पर हिंसा का आरोप लगाते है। वे कभी अपने वेदों को नहीं देखते। यह मोमिन अथर्ववेद और ऋग्वेद के कुछ उदहारण देकर अपनी बात को सिद्ध करने का प्रयास कर रहा हैं। इसके वीडियो को देखकर एक ही निष्कर्ष निकलता है कि उल्लू को दिन में न दिखे तो यह सूर्य का दोष नहीं हैं। वेद रूपी ईश्वरीय ज्ञान को मानव कृत कुरान की रोशनी में देखने कुछ ऐसा ही हैं।

आईये वेद और कुरान में दिए गए सन्देश के अंतर को समझने का प्रयास करे।

मोमिन श्री क्षेमकरण त्रिवेदी जी के वेदभाष्य से अथर्ववेद १२/५/६२ का उदहारण देते हुए कहता है कि,''तू वेदनिंदक को काट डाल, चीर डाल,फाड़ दे, जला दे, फूंक दे, भस्म कर दे।''

अथर्ववेद १२/५/६८ का उदहारण देते हुए कहता है कि ''वेद विरोधी के लोमों को काट डाल, उसके मांस के टुकड़ों की बोटी बोटी कर दे, उसके नसों को ऐंठ दे, उसकी हड्डियां मिसल कर, उसकी मिंग निकाल दे, उसके सब अंगों को, जोड़ों को ढीला कर दे।''

इन वेदमंत्रों के आधार पर मोमिन वेदों का हिंसा का समर्थक सिद्ध करने का प्रयास कर रहा है। जो शंका मोमिन ने उठाई है। यह कोई नवीन शंका नहीं हैं। पिछले १२५ वर्षों में अब्दुल गफूर, सन्नाउल्लाह अमृतसरी, मौलवी असमतउल्लाह खां आदि ने यह शंका अनेक बार उठाई हैं। आर्यसमाज के विद्वानों ने उसका यथोचित उत्तर भी समय समय पर दिया है।

मोमिन के चिंतन में गंभीरता की कमी देखिये जो वह यह न देख पाया कि वेदमंत्र वेद निंदक के विषय में ऐसा कह रहे हैं। वेद की आज्ञा धर्म का पालन है। धर्म क्या है? सार्वजनिक पवित्र गुणों और कर्मों का धारण व सेवन करना धर्म है। स्वामी दयानंद के अनुसार धर्म की परिभाषा -जो पक्ष पात रहित न्याय सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है। उसी का नाम धर्म और उससे विपरीत का अधर्म है। साधारण भाषा में सत्य बोलना, ईश्वर की पूजा करना, शिष्टाचार, सदाचार यह धर्म है और चोरी,हत्या, असत्य भाषण, बलात्कार, अत्याचार आदि करना अधर्म है। अब मोमिन साहिब ही बताये कि क्या चोरी, लूट-पाट, हत्या, बलात्कार, हिंसा आदि करने वाले को दंड नहीं मिलना चाहिए? अवश्य मिलना चाहिए। वेद यही तो कह रहा है। फिर भी आपके पेट में दर्द हो रहा है।

चलो एक अन्य तर्क देते है। वैदिक काल में कोई मत-मतान्तर, मजहब आदि कुछ नहीं था। केवल वैदिक धर्म था। इसलिए इन वेद मन्त्रों को इस प्रकार से लेना कि वेदों में ये मुसलमानों के लिए हैं। केवल आपकी अज्ञानता है। वैदिक काल में इस्लाम ही नहीं था तो इस्लाम के मानने वालों पर अत्याचार की बात करना केवल ख्याली पुलाव है।

एक अन्य महत्वपूर्ण बात समझे। वेदों की शत्रु के नाश की आज्ञा किसके लिए हैं। वेदों की आज्ञा राजा, शासक, प्रशासन, न्यायाधीश के लिए हैं। वेद उन्हें अपने कर्तृतव्य निर्वाहन की आज्ञा दे रहा है। क्या भारतीय संविधान में आज किसी अपराधी को अपराध के लिए दंड देने, जेल भेजने, फांसी लगाने का विधान नहीं हैं? अवश्य है। तो क्या आप कभी यह कहते है कि हमारा संविधान हिंसा को बढ़ावा देता हैं। नहीं। फिर वेदों पर यह आक्षेप लगाना क्या आपकी मूर्खता नहीं है? इसी प्रकार से वेद गौहत्या करने वाले को सीसे की गोली से भेदने का आदेश देते हैं। पर यह सन्देश भी राजा या शासक के लिए हैं। गौ जैसे कल्याणकारी पशु के हत्यारे को राजा दण्डित करे। इस सन्देश में भला क्या गलत है?

अब जरा मोमिन अपने घर भी झांक ले। एक कहावत है। जिनके घर शीशे के होते है। वो दूसरों के घरों पर पत्थर नहीं फेंकते। आपकी कुरान की कुछ आयतों में खुदा की आज्ञा देखिये- और जब इरादा करते हैं हम ये कि हलाक अर्थात कत्ल करें किसी बस्ती को, और हुकुम करते हैं हम दौलतमंदों को उसके कि, पस! नाफरमानी करते हैं, बीच उसके! बस। साबित हुई ऊपर उसके मात गिजब की, बस! हलाक करते हैं हम उनको हलाक करना। -कुरान मजीद सूरा ७, रुकू २, आयत ६

इसकी अगली आयत देखिये- और बहुत हलाक किये हैं हमने क्यों मबलगो? तुम्हारा खुदा तो जब उसे किसी बस्ती के हलाक करने का शौक चढ़ आये तब उसमें रहने वाले दौलतमंदों को नाफरमानी करने का अर्थात आज्ञा न मानने वाले का हुक्म दे! या यूँ कहते हैं कि इसके इस हुक्म की तालीम करें की नाफरमानी करो तो उन्हें और उनके साथ बस्ती में रहने वाले बेगुनाहों, मासूम बच्चों तक को अपना शोक पूरा करने के लिए हलाक अर्थात कत्ल करें।

स्वयं की रक्षा करना और अपनी सामाजिक व्यवस्था की रक्षा करने का नियम सामान्य ईश्वरीय नियम है। यह संसार के हर जीव का अधिकार है। और कुरान सूरा माइदा आयत ४५ में क्या लिखा है। प्रमाण देखिये-

हमने उन लोगों के लिए यह हुकुम लिख दिया कि- जान के बदले जान, आंख के बदले आंख, नाक के बदले नाक, कान के बदले कान, दाँत के बदले दाँत और सब जख्मों का इसी तरह बदला हैं।

अब वेद ने शत्रु के संहार की अनुमति दे दी तो क्या गजब कर दिया। क्या कोई मुसलमान यह कहेगा कि अपनी रक्षा करना क्या कोई अपराध है। नहीं। कोई समाज के नेक मनुष्यों को पीड़ित करें तो क्या उसे दण्डित न किया जाये।

अब इस लेख के सबसे महत्वपूर्ण भाग को पढ़े। अगर एक मनुष्य उच्च चरित्र वाला हो, पूजा करने वाला हो, दानी हो, आस्तिक विचारों वाला हो, सब बुराइयों से बचा हुआ हो, ईश्वर को मानने वाला हो परन्तु किसी रसूल, किसी नबी, किसी पैगम्बर, किसी मध्यस्थ, किसी संदेशवाहक, किसी मुख्तयार, किसी कारिंदा को न मानने वाला हो। तो क्या वह मनुष्य कत्ल करने योग्य है? और जैसे भी, जहाँ भी मिले उसे मार दो, कत्ल कर दो। क्या कोई व्यक्ति ईश्वर को छोड़कर किसी अन्य मध्यस्थ को न माने तो क्या वह कत्ल के लायक है? वेदों में अनेक मन्त्रद्रष्टा ऋषियों का वर्णन है। क्या कोई व्यक्ति केवल ईश्वर को मानता हो और सदाचारी जीवन व्यतीत करता हो पर किसी ऋषि -आर्यवीर आर्य पूर्वनाम मुहम्मद अली को न मानता हो। क्या वह मारने योग्य है? नहीं। जबकि कुरान के अनुसार वह काफिर है। इसलिए मारने योग्य है। इस विषय में कुरान क्या कहती हैं। देखिये-

१. और कत्ल कर दो यहां तक की न रहे बाकि फिसाद, यानि गलबा कफ्फार का। कुरान मजीद, सूरा अन्फाल,आयत ३९

२. मुशिरकों को जहां पाओ, कत्ल कर दो और पकड़ लो और घेर लो और हर घात की जगह पर उनकी ताक में बैठे रहो। - कुरान मजीद, सूरा तौबा,आयत ५

३. ऐ नबी! मुसलमानों को कत्लेआम अर्थात जिहाद के लिए उभारों। - कुरान मजीद, सूरा अन्फाल,आयत ६५

४. जब तुम काफिरों से भिड़ जाओ तब तुम उनकी गर्दनें उड़ा दो, यहां तक की जब उनकी खूब कत्ल कर चुको , और जो जिन्दा पकड़े जायें, उनको मजबूती से कैद कर दो। - कुरान मजीद, सूरा मुहम्मद,आयत ४

५. ऐ पैगम्बरॉ काफिरों और मुनाफिकों से लड़ो और उन पर सख्ती करो, उनका ठिकाना दोजख है, और बहुत ही बुरी जगह हैं। - कुरान मजीद, सूरा तहरीम,आयत ९

अब आप क्या कहेंगे मोमिन साहिब। इन आयतों में किसके कत्ल की आज्ञा हैं। किसी डाकू-चोर, बलात्कारी को मारने की आज्ञा नहीं है। बल्कि कोई व्यक्ति चाहे कितना नेकदिल हो, कितने सत्कर्म करने वाला हो। उसे केवल मुहम्मद साहिब और रसूल पर विश्वास न लाने के कारण मारने की बात करना क्या सही हैं? इसके विपरीत किसी आदमी में दुनिया की चाहे तमाम बुराइयां हो, उसका आचरण चाहे दुष्ट मनुष्य वाला हो। वह केवल पैगम्बर पर विश्वास लाने वाला हो। तो वह काफिर नहीं बल्कि मोमिन है। अब आप ही बताये दुनिया में किसी मजहबी किताब में ऐसी बेइन्साफी, जुल्म, निरपराध का खून बहाने की आज्ञा होगी? हरगिज-हरगिज नहीं। दुनिया में इस्लाम और कुरान को छोड़कर ऐसा सन्देश कहीं नहीं है। पूरी कुरान ही ऐसी आज्ञाओं से भरी पड़ी हैं। जबकि इसके विरपित वेदों की शिक्षाओं पर जरा ध्यान दो। वेद कहते है-

१. हे मनुष्यों! तुम सब एक होकर चलो! एक होकर बोलो। तुम ज्ञानियों के मन एक प्रकार हो। तुम परस्पर इस प्रकार व्यवहार करो, जिस प्रकार तुमसे पूर्व पुरुष अच्छे ज्ञानवान, विद्वान, महात्मा करते हैं। -ऋग्वेद १०/१९१/२

२. हे मनुष्यों तुम सब आपस में ऐसे प्रेम करो जैसे एक गौ अपने बछड़े से करती है। -अथर्ववेद ३/३०/४

३. हे मनुष्यों! तुम्हारे घरों में ये वेद का ज्ञान दिया जाता है। जिसके ज्ञान से विद्वान, परमात्मा लोग एक दूसरे से अलग नहीं होते। और न आपस में शत्रुता करते है। --अथर्ववेद ३/३०/५

४. न कोई बड़ा है, न छोटा है। सब भाई भाई आपस में मिलकर आगे बढ़ो।

-यजुर्वेद ३६/१८

वेदों की शिक्षा सकल मानव जाति के लिए है। कुरान में ऐसे शिक्षाओं का स्थान ही नहीं हैं। जो थोड़ी बहुत है। वो केवल अन्य मुसलमानों के लिए है। कुरान की इन्हीं संदेशों के कारण सभी जानते है कि पिछले १२०० वर्षों में इस पवित्र भारत भूमि पर मुस्लिम आक्रांताओं ने इस्लाम के नाम पर असंख्य अत्याचार किये। १९४७ में देश के दो टुकड़े करने, एक करोड़ लोगों का विस्थापन करने, लाखों निरपराध स्त्रियों का बलात्कार करने, लाखों बच्चों को अनाथ करने और लाखों की हत्या करने के बाद भी मुसलमान कभी यह स्वीकार नहीं करते कि इस्लाम के नाम पर उन्होंने सदा अत्याचार किया हैं। क्या इतिहास में लाखों हिन्दू मंदिरों को लूटना, तोड़ना, आग लगाना, उन्हें मस्जिद में तब्दील नहीं किया गया? इसके उलटे कुछ स्वयंभू मोमिन हिन्दुओं पर कट्टरवादी होने का दोष लगाते हैं। क्या आपने कभी सुना कि हिन्दुओं ने किसी इस्लामिक देश पर आक्रमण कर वहाँ के बाशिंदों के साथ ठीक वैसा ही व्यवहार किया जैसा मुसलमानों ने यहाँ के हिन्दुओं के साथ किया हैं। नहीं। फिर भी मुस्लिम समाज यह अपेक्षा करता है कि लोग उसे शांतिप्रिय कौम के नाम से जाने। सभी मुसलमानों को हठ और दुराग्रह छोड़कर गम्भीरतापूर्वक इस विषय पर विचार करना चाहिए कि कत्लेआम वेद सिखाते है अथवा कुरान।

(साभार-सोशल मीडिया)

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र आर्यमित्र आर्यमित्र ०५ एवं १२ सितम्बर, २०२४ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

.....

NDA/TES में गुरुकुल के छात्रों ने तोड़े सारे रिकार्ड

इस वर्ष गुरुकुल के 17 छात्र एन.डी.ए और टी.ई.एस. के लिए हुए सेलेक्ट

कुरुक्षेत्र-गुरुकुल कुरुक्षेत्र के ब्रह्मचारियों ने पुराने सभी रिकार्ड को तोड़ते हुए इस वर्ष एन.डी.ए./टी.ई.एस. में १७ रिकमंडेशन लेकर कामयाबी की नई मिसाल कायम की है। पिछले वर्ष की बात करें तो गुरुकुल के १४ छात्रों का चयन एन.डी.ए./टी.ई.एस. में हुआ था जो अब भारतीय सेनाओं में उच्च अधिकारी पद की ट्रेनिंग ले रहे हैं। छात्रों की शानदार सफलता पर पूरे गुरुकुल में उत्साह का माहौल है। महामहिम राज्यपाल आचार्य श्री देवव्रत जी ने इसके लिए छात्रों को शुभकामनाएं देते हुए निदेशक ब्रिगेडियर डा. प्रवीण कुमार, प्राचार्य सूबे प्रताप, मुख्य संरक्षक संजीव आर्य, एनडीए विंग के सूबेदार बलवान सिंह, अशोक कुमार चौहान इंस्ट्रक्टर कोर्डिनेटर को विशेष बधाई दी है।

ब्रिगेडियर डा० प्रवीण कुमार ने बताया कि इस वर्ष गुरुकुल के दीपान्शु, आर्यन, कार्तिक, मुकुलजीत, कुमार आदित्य, गोल्डी, ऋषभराज, अभिनन्दन, यश बुकर, दीपक तेवतिया, मौसम, सन्नी रावल, आर्य प्रताप का चयन एन.डी.ए में हुआ है जबकि अरुण कुमार, प्रवेश कुमार, गौरव, विश्वदीप का चयन टी.ई.एस. में हुआ है। इनमें से अधिकांश छात्र जुलाई २०२४ में एन.डी.ए./टीईएस के प्रशिक्षण हेतु एनडीए खडगवासला, पुणे व दूसरे संस्थानों में जा चुके हैं।

निदेशक प्रवीण कुमार ने बताया कि महामहिम राज्यपाल आचार्य श्री देवव्रत जी ने देश सेनाओं को कर्मनिष्ठ, ईमानदार और देशभक्ति के जज्बे से परिपूर्ण उच्च अधिकारी देने का जो सपना संजोया था, वह अब पूरा हो रहा है। गुरुकुल कुरुक्षेत्र से प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में एनडीए के माध्यम से छात्र भारतीय सेनाओं में जा रहे हैं। वर्ष २०१६ से शुरु हुआ यह सिलसिला निरन्तर जारी है और अब तक गुरुकुल के ६१ छात्र भारतीय सेनाओं में चयनित हो चुके हैं। केवल भारतीय सेना ही नहीं अपितु मेडिकल, इंजीनियरिंग में भी गुरुकुल के छात्र पीछे नहीं है, एनआईटी, आईआईटी, नीट में भी गुरुकुल के १०५ से अधिक छात्रों का चयन हुआ है। कुल मिलाकर गुरुकुल कुरुक्षेत्र छात्रों के उज्ज्वल भविष्य की गारंटी का एक प्रमुख संस्थान बनकर उभरा है और अभिभावकों के इस भरोसे को भविष्य में भी गुरुकुल प्रबंधन इसी प्रकार कायम रखेगा।

चिंतन से समाधान

-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

अधिकांश लोग अपने बुढ़ापे को लेकर चिंतित रहते हैं। वे यह सोचते हैं कि ''हमारा बुढ़ापा कैसा बीतेगा? सुख से या दुख से? बुढ़ापे में कोई हमारी सेवा करेगा या नहीं करेगा? पता नहीं बुढ़ापे में शरीर स्वस्थ रहेगा या कुछ रोग लग जाएंगे? इत्यादि।''

इस प्रकार की चिंताएं प्रायः लोगों को लगी रहती हैं। वेद आदि शास्त्रों में बताया है, कि ''चिंता करने से कोई समाधान नहीं निकलता, बल्कि चिंतन करने से कोई न कोई समाधान निकल आता है। इसलिए बुढ़ापे की चिंता न करें, परंतु चिंतन अवश्य करें।''

''जो लोग अपने बुढ़ापे को सुखदायक बनाना चाहते हैं, उन्हें अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए। अपने परिवार और समाज के लोगों के साथ ईमानदारी सभ्यता नम्रता बुद्धिमत्ता शिष्टाचार एवं न्याय से व्यवहार करना चाहिए।'' जो लोग इस प्रकार से अपने परिवार और समाज के लोगों के साथ व्यवहार करते हैं, उनका बुढ़ापा सुखमय होता है। ''अर्थात पहले तो उनके जीवन में कोई इस प्रकार की दुख भरी स्थितियां आती ही नहीं। और यदि किन्हीं कारणों से आ भी जाएं, तो परिवार एवं समाज के लोग उनकी सेवा बड़ी प्रसन्नता से कर देते हैं। इस प्रकार से उनका बुढ़ापा दुखरहित एवं सुखमय ढंग से बीत जाता है।''

''जो लोग अपने जीवन में परिवार तथा समाज के लोगों के साथ अनेक प्रकार के दुर्व्यवहार करते हैं। उन पर अन्याय एवं अत्याचार करते हैं। हठ दुराग्रह एवं दुरभिमान के कारण मनमानी करके उन्हें अनेक प्रकार से दुख देते हैं।'' ''ऐसे लोगों की बुढ़ापे में बहुत दुर्गति होती है। कोई उनके पास बैठना नहीं चाहता। कोई उनसे बात करना नहीं चाहता। कोई उनकी सेवा करके खुश नहीं होता। तब लोग मजबूरी में कहीं-कहीं थोड़ी बहुत सेवा कर देते हैं। यदि इतनी सेवा भी नहीं करेंगे, तो उस दुष्ट व्यक्ति के रोगों से समाज के लोगों को हानियां एवं दुख प्राप्त होने लगेगा।'' ''इसलिए समाज के लोग अपनी सुरक्षा के लिए, न चाहते हुए भी उस दुष्ट व्यक्ति की थोड़ी बहुत सेवा कर देते हैं।''

आप भी यदि अपना बुढ़ापा ठीक-ठाक बिताना चाहते हों, तो ऊपर बताई बातों पर ध्यान दें। ''अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें। अपने बच्चों को उत्तम संस्कार दें। बचपन से ही उन्हें ईश्वर भक्ति यज्ञ संध्या उपासना परोपकार सभ्यता नम्रता सच्चाई ईमानदारी इत्यादि उत्तम गुण सिखाएं।'' ''बच्चों को सिखाने से पहले आप स्वयं अपने जीवन में इन उत्तम गुणों को धारण करें, तभी आपके बच्चे भी आपको देखकर संस्कारित होंगे।''

''यदि आप इतना कर लेंगे, तो आपका भी बुढ़ापा सुरक्षित हो जाएगा, और कुछ ठीक ढंग से बीतेगा।''

पुडुचेरी में वैदिक विद्या केंद्र का लोकार्पण उत्सव

(यह ज्ञान ज्योति पर्व में समाहित)

वैदिक विद्या केन्द्र के नाम से दक्षिण भारत के पुडुचेरी (पूर्व पॉन्डिचेरी) में एक अलौकिक प्रकल्प का निर्माण किया गया है। इसके सुरम्य और शांत वातावरण में किसी भी उम्र का साधक वैदिक विद्याओं के गहन अध्ययन तथा ध्यान-साधना करने हेतु आ सकता है। यह सभी प्रकार के आधुनिक संसाधनों और आवासीय सुविधाओं से परिपूर्ण है। प्राच्य और आधुनिक विद्या प्रदान करने वाला गुरुकुल भी यहाँ प्रारंभ हो चुका है।

इस केन्द्र में वैदिक विद्वानों, प्रचारकों, पुरोहितों एवं कार्यकर्ताओं के निर्माण हेतु कार्यशालाओं तथा शिविरों का आयोजन निरन्तर चलता रहेगा। उच्च कोटि के विद्वान यहाँ आकर प्रशिक्षण का कार्य सम्पन्न करते रहेंगे। इसी केन्द्र में आर्य युवा आत्मनिर्भर योजना के अंतर्गत आर्य युवकों/युवतियों को प्रशिक्षित भी किया जा रहा है जिससे वे आत्मनिर्भर होते हुए प्रचार का कार्य भी करते रहें। इस केन्द्र में उपलब्ध संसाधनों और सुविधाओं द्वारा हर जिज्ञासु यहाँ रह कर अपना कार्य ऑनलाइन करते हुए वैदिक विद्याओं एवं साधना का लाभ उठा सकता है। इस केंद्र द्वारा डिजिटल माध्यम से विश्व स्तर पर वैदिक प्रचार प्रसार भी होगा।

इस केंद्र को चेन्नई स्थित, आर्यसमाज फाउन्डेशन एवं डी.ए.वी स्कूल द्वारा स्थापित किया गया है। इनके अंतर्गत अनेक स्कूल चल रहे हैं जिनमें ४५ हजार विद्यार्थी पढ़ते हैं।

वैदिक विद्या केन्द्र का शिलान्यास दो वर्ष पूर्व १६ जुलाई, २०२२ को श्री सुरेश चंद्र आर्य, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा किया गया था। इस केंद्र का लोकार्पण वर्ष भर चलने वाले उत्सव के रूप में मनाया जा रहा है, जिसका शुभारंभ १५ सितंबर, २०२४ से होगा। तदुपरांत एक वर्ष पर्यन्त कार्यक्रमों की सुनिश्चित योजना तय की गयी है। इसमें वैदिक एवं आर्ष विद्या की आधुनिक युग में प्रासंगिकता, जीवनोपयोगिता एवं व्यक्ति, समाज, राष्ट्र को दिशा देने वाले विषयों पर वैदिक विद्वानों के व्याख्यान, संगोष्ठी, कार्यशालाएं एवं शिविर आदि आयोजित किये जाएंगे। ये कार्यक्रम विद्यार्थी, शोधार्थी, गृहस्थी, वानप्रस्थी आदि सभी जिज्ञासुओ को ध्यान में रखते हुये आयोजित किये जा रहे हैं।

शुभ संयोग से, वैदिक विद्या केंद्र की स्थापना इसी वर्ष में हो रही है जब स्वामी दयानंद की द्विशताब्दी जयंती और आर्य समाज की स्थापना के १५० वर्ष ज्ञान ज्योति पर्व के रूप में मनाए जा रहे हैं। अतः सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस लोकार्पण उत्सव को ज्ञान ज्योति पर्व के अंतर्गत समाहित कर लिया है।

वैदिक विद्या केंद्र सभी जिज्ञासुओं और आर्य जनों को आमंत्रित करता है कि वर्षभर के इस उत्सव में सपरिवार भाग लेकर एक ऐतिहासिक अवसर के साक्षी बनें एवं विभिन्न विद्वानों का सान्निध्य प्राप्त कर लाभान्वित हों। साथ में पुडुचेरी और दक्षिण भारत में भ्रमण इत्यादि भी करें।

कार्यक्रम की विस्तृत जानकारी के लिए वेबसाईट www-vvk-davchennai-org देखें अथवा (७४१८७२७१३३/ ९१७६४१०१६४)/ईमेल vvk@davchennai-org पर संपर्क करें। आनलाइन पंजीकरण के लिए हमारे वेबसाइट पर जा कर पंजीकरण पत्र भरें। आपके पंजीकरण की पुष्टि दो दिन में कर दी जाएगी और पंजीकृत अतिथियों के आवास एवं भोजन की व्यवस्था केंद्र में ही होगी। सभी अतिथियों से निवेदन है कि इस उत्सव में भाग लेने के लिए ध्यातव्य बिन्दु, जो कि पत्र के साथ संलग्न हैं, अवश्य पढ़ लेवे।

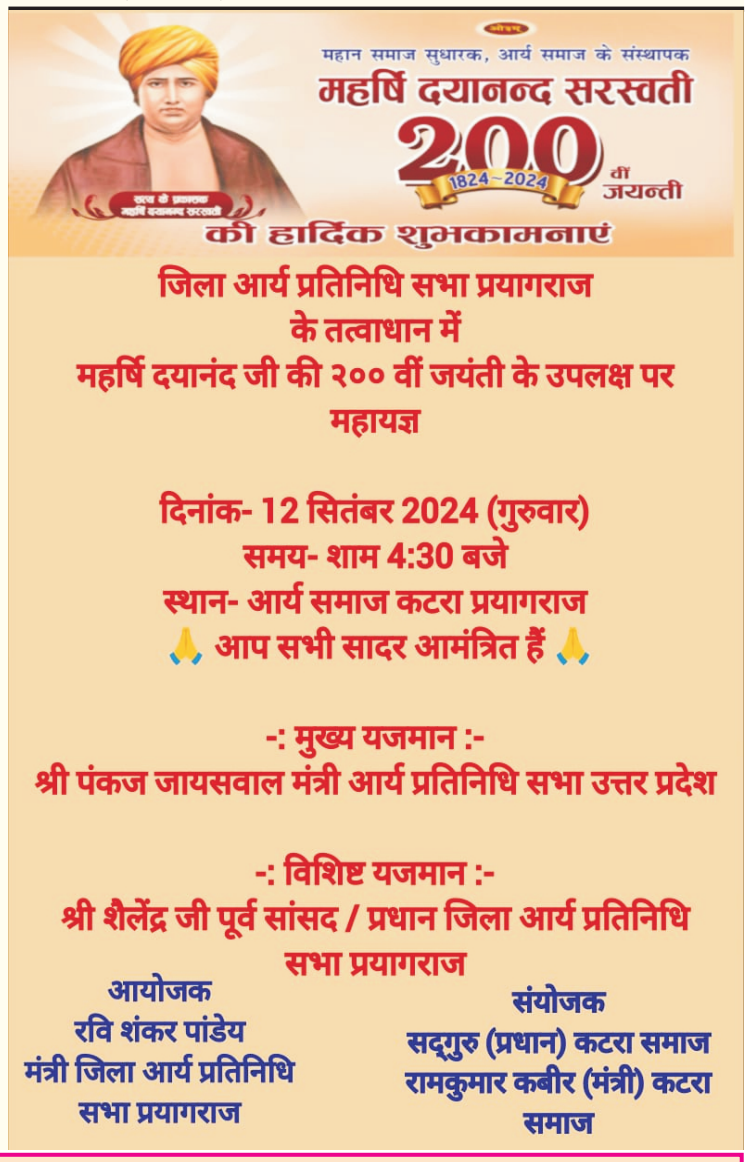

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।